

महात्मा मार्टिन लूथर ।

ओंकार आदर्श चरित माला की २३ वीं पुस्तक

महात्मा मार्टिन लूथर

का

जीवन चरित्र

लेखक

लालता प्रसाद टंडन

एम० ए० ,एल० एल० बी०

स्वर्गीय पण्डित ओंकारनाथ वाजपेयी

तथा

पं० रामप्रसाद त्रिपाठी एम० ए०

द्वारा

सम्पादित

पं० काशीनाथ वाजपेयी के प्रबन्ध से ओंकार प्रेस, प्रयाग से छपकर प्रकाशित

प्रथमावृत्ति] [मूल्य ।=)

समर्पण

—— ० ——

जिनका उत्साह अदम्य, जिनका चरित्र स्वच्छ और पवित्र,

जिनके विचार उच्च और उदार जिनके उद्देश्य

शुद्ध और नि स्वार्थ

थे

ऐसे श्रीमान् पडित ओङ्कारनाथ वाजपेयी जी

की

स्मृति मे ग्रथकार की यह तुच्छ भेंट

सादर समर्पित है।

भूमिका

धर्म, नदी के स्रोत की भांति, प्रारम्भ में स्वच्छ और पवित्र होता हुआ भी कुछ दूर आगे बढ़, कुछ समय के उपरान्त, अनेक अन्य गुणवाले सहकारी स्रोतों के संगम से, अनेक प्रकार के स्वभाव और गुणवाली जातियों को स्वीकार करने के कारण गदला और मैला हो जाता है। उसकी आदि निर्मलता नष्ट हो जाती है और उस निर्मलता का स्थान अघन्यकार्यों ग्रहण करती है संसार के सब धर्मों के इतिहास से प्रमाणित धर्मों की उत्पत्ति उत्थान और प्रलय का यह एक साधारण नियम है। धर्म के अशुद्ध हो जाने और आदि पवित्रता से गिर जाने पर, उस धर्म की कुछ महान् आत्माएं उस धर्म को सुधारने का उद्योग करती हैं क्योंकि "यदा यदाहि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत। अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्" इति।

महात्मा मार्टिन लूथर भी संसार के अनेक धार्मिक सुधारकों में से एक हैं। ईसाई धर्म के लिये मार्टिन लूथर ठीक वैसे ही हुए हैं जैसे आधुनिक हिन्दू धर्म के लिये स्वामी दयानन्द। जिस समय मार्टिन लूथर ने जन्म लिया था उस समय की ईसाई धर्म की अवस्था (जिसका सविस्तार वर्णन पुस्तक में किया गया है) आधुनिक हिन्दू धर्म की अवस्था से इतनी अधिक मिलती है कि कुछ आश्चर्यान्वित सा हो जाना पड़ता है। धर्म पुरोहितों का धन ले पाप प्रतिशोध

का आश्वासन देना, साधुसघों को नि सीम धनी और फलत व्यभिचारी होना, धर्म के वाह्य कर्म कांड पर मुग्ध हो धर्म के तत्वों का भूल जाना, धर्म के आदि ग्रन्थों का स्वार्थ लोलुप भाष्यकारों द्वारा मनमाना अर्थ किया जाना, जनता का अधिकाश रूप में वहमी और भूत प्रेतों में विश्वास करनेवाला होना, धर्मकृत्यों का सत्यनारायण की कथा तथा तीर्थ यात्राओं की रेल पेल तक ही परिमित होना, प्रत्येक तीर्थ स्थानों पर, गया प्रयाग के पडे, मथुरा के चौवे, काशी के सन्यासी, श्रीनाथ के गोसाई आदि के रूप में एक के स्थान पर अनेक पोपों का होना, एक विचित्र तुलनात्मक चित्र हृदयांक पर चित्रित करता है।

यह एक सामान्य अनुभव की वात है कि अपने दोप अपने आप को नहीं दिखायी पडते। परतु वे ही दोप यदि किसी अन्य में दीख पडते है तो वडे घृणास्पद विदित होते हैं। दूसरों के दोपों की समालोचना करते हुए कभी २ ध्यान हो आता है कि कहीं ये ही दोप मेरे में भी तो नहीं है। इस सदेह का उठना कि मनुष्य अपनी परीक्षा करना प्रारभ कर देता है। हमें आशा है कि हमारे हिन्दू पाठक पाठिकाये गण तत्कालीन ईसाई धर्म की अवस्था का ज्ञान कर फिर एक दृष्टि अपने धर्म की ओर भी करेंगे और यह सोचने का उद्योग करेंगे कि कहीं वेही दोप हमारे धर्म में भी तो नामान्तर से उपस्थित नहीं हैं। यदि यह जीवनी किसी अश में भी हिन्दुओं की समालोचना बुद्धि उनके निज के धर्म की त्रुटियों की ओर प्रेरित कर सकी तो अपने उद्देश्य में बहुत कुछ सार्थक समझी जानी चाहिये।

यद्यपि जीवनी अल्पकाय है परन्तु तब भी यह बात दृढ़ता के साथ कही जा सकती है कि मार्टिन लूथर सम्बन्धी कोई घटना या विवेचना ऐसी नहीं है जो किसी महत्व की हो और इस पुस्तक में स्थूल या सूक्ष्म रूप से उसका समावेश न किया गया हो। दूसरी उल्लेखनीय बात यह है कि इसमें कोई भी ऐसी बात नहीं लिखी गयी है जो किसी न किसी प्रमाणिक ग्रंथ के आधार पर न हो।

यह जीवनी श्रीमान् स्वर्गीय पंडित ओंकारनाथ वाजपेयी जी के जीवनकाल ही में समाप्त कर उन्हें दे दी गयी थी और पंडित जी ने इसे स्वयं देखने की कृपा भी की थी। यद्यपि यह जीवनी उनके सामने प्रेस में नहीं जा सकी परन्तु इसका और सब प्रकार का संपादन कार्य पंडित जी स्वयं समाप्त कर चुके थे। श्रीमान् पंडित ओंकारनाथ वाजपेयी जी द्वारा संपादित आदर्श चरित माला का यह अंतिम प्रसून है, उनकी हिन्दी साहित्य सेवा का यह अंतिम फल है, उनकी समाज सेवा सम्बन्धिनी वाञ्छाओं का यह अंतिम उद्गार है।

मुट्ठीगंज-प्रयाग

निवेदक—
ललता प्रसाद टण्डन

नोट —यद्यपि अभी अन्य कई एक पुस्तकें स्वर्गीय पं० जी के द्वारा सम्पादित की हुई पड़ी हैं जो यथा समय प्रकाशित की जायेंगी—सं०

महात्मा मार्टिन लूथर

प्रथम परिच्छेद

जन्म और बाल्यकाल

संसार के अधिकांश महापुरुषों ने, जिनकी चित्त शक्तियों ने मानुषिक जीवन प्रवाह के एक नवीन मार्ग पर चलाने को बाधित किया है बहुधा अपनी बाललीला किसी छोटे ग्राम ही में खेली है। किसी तुच्छ वन खंड, किसी साधारण कुल को ही उच्चतम और प्रसिद्ध बनाना मानो इन महापुरुषों को अभीष्ट है। महात्मा मार्टिन लूथर का जन्म भी एक बहुत सामान्य कुल तथा अज्ञात स्थान में हुआ था। १० नवम्बर सन १४८३ ई० में ईसलीबन नामक स्थान पर आपका जन्म हुआ। इनके पिता का नाम हैन्स लूथर और माता का मार-गरेट था। लुथर के माता पिता का पैतृक निवास स्थान सैक्सनी (जर्मनी) प्रांत में थुरजियन वन के निकट मोहरा ग्राम था। लुथर के जन्म समय के कुछ ही पूर्व उनके पिता मोहरा से ईसलीबन में आकर बस गये थे। मार्टिन लूथर के पिता ने मोहरा क्यों त्यागा इसके बारेमें कोई [illegible] है। किसीर

जगन्नाथ मैरोटान

बड़ी निराशा हुई और इन्हें जीविका निर्वाहार्थ मैन्सफील्ड जाना पड़ा। यहाँ आकर प्रथम तो इस कुल को दरिद्रता से घोर युद्ध करना पड़ा। लूथर कहता है "मेरा गरीब पिता एक खान का काम करने वाला था, मेरी माता को सब लकड़ी अपनी पीठ पर ढोकर लानी पड़ती थी"। परंतु 'उद्योगिन पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मी' के अनुसार हैंस की अवस्था शीघ्र सुधरने लगी और थोड़े ही दिनों में यह कुल, गाढ़ी दाल से खुश हो गया। धन प्राप्ति के साथ ही साथ पदोन्नति भी होती गई यहाँ तक कि हैंस लूथर नगर की सभा (City Council) के सभासद हो गये।

हैंस लूथर के सात लड़की लड़के थे उनमें मार्टिन लूथर ज्येष्ठ था। हैंस लूथर संतति की शिक्षा दीक्षा के विषय में चाणक्य का शिष्य था। उसका भी यही सिद्धांत था कि "लाडने बहुवो दोषा ताड्ने बहुवो गुणा तस्मात् पुत्रश्चशिष्यश्च ताडयेन्न तु लालयेत्"। यद्यपि बड़े होने पर मार्टिन लूथर भी उपरोक्त सिद्धान्त के पक्ष में हो गया था और उसके बहुत से ऐसे वचन उद्धृत किये जा सकते हैं जिससे यह स्पष्ट है कि उनकी परिपक्व बुद्धि ने 'चटकन मुख भजन' से बढ़कर दूसरी बालदोषौषध नहीं ढूंढ पायी थी परंतु तब भी जब ये औषध उन्हें स्वयं पीनी पड़ती थी तब वो इसे बड़ी असहनीय और कड़ुई मानते थे। जो कुछ भी हो मार्टिन लुथर के माता पिता तनिक २ से दोषों के उपसंहार में इनकी (लगुडिमुष्टिकाहस्तपादप्रहारेण) अच्छी खबर लेते थे। यहाँ तक कि मार्टिन लुथर लिखते हैं कि "बाल्यकाल के ऐसे कठोर जीवन ने आगे चलकर साधु होने में मुझे अधिक सहायता दी"।

श्रान्त पथिक को मोहराग्राम वृद्धके अब भी वह खेत दिखाते हैं जहाँ हैन्स लूथर के मोटे लट्ठ ने खेत में अनधिकार प्रवेश करने वाले किसी गडरिये को जीवन मुक्त किया था। कहते हैं कि इसी हत्या के भय से हैंस लूथर मोहरा छोड भागा। कुछ लोगों का कथन है कि ईसलीवन में एक बडा मेला लगता था और मार्टिन लूथर की मा मेला देखने गई थी और वहां ही लूथर का जन्म हुआ। परतु यह असभव सा प्रतीत होता है। ईसलीवन मोहरा से १८ जर्मन मील है। इतनी दूर एक कठोर गर्भा स्त्री मेला देखने जायगी! वास्तविक बात यह है कि ईसलीवन के भूगर्भ में कच्चे ताँबे की-अच्छी खाने थीं और हैंस लूथर खान का व्यवसायी था। ऐसी अवस्था में भूगर्भस्थसम्पत्ति की खोज ही हैंस लूथर के देश त्याग का पर्याप्त कारण विदित होता है।

जापान को उन्नतिशील देख, तथा प्रतिद्वंद्वता में बराबर की टक्कर मारते पा, कुछ पाश्चात्य विद्वानों को उसे पुरखिन यौरोपा का नाती सिद्ध करने की बडी लालसा होगई है। मार्टिन लूथर को भी लोथायर नामक निकटस्थ भारी सामन्तकुल का पुत्र सिद्ध करने का बडा उद्योग किया गया है परन्तु महात्मा लूथर स्वय अपनी हीन अवस्था का यों प्रमाण देते हैं "मैं कृषक का पुत्र हू, मेरे पिता, पितामह, प्रपितामह सब ही, एक सीधे कृषक थे"। उसे उसके गरीब पिता की गोद से छीन एक अमीर खानदान का (गोद लिया) पुत्र सिद्ध करने के और कई प्रमाण भी दिये जाते हैं परतु वे सब सारहीन हैं।

हैंस लूथर का काम ईसलीवन में न जमा। मारगेरट के गर्भोत्यपन्नरत्न को छोड ईसलीवन के पृथ्वी गर्भ से हैंस को

बड़ी निराशा हुई और इन्हें जीविका निर्वाहार्थ मैन्सफील्ड जाना पड़ा। यहाँ आकर प्रथम तो इस कुल को दरिद्रता से घोर युद्ध करना पड़ा। लुथर कहता है "मेरा गरीब पिता एक खान का काम करने वाला था, मेरी माता को सब लकड़ी अपनी पीठ पर ढोकर लानी पड़ती थी"। परन्तु 'उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मी' के अनुसार हैंस की अवस्था शीघ्र सुधरने लगी और थोड़े ही दिनों में यह कुल, रोटी दाल से खुश हो गया'। धन प्राप्ति के साथ ही साथ पदोन्नति भी होती गई यहाँ तक कि हैंस लूथर नगर की सभा (City Council) के सभासद हो गये।

हैंस लूथर के सात लड़की लड़के थे उनमें मार्टिन लुथर ज्येष्ठ था। हैंस लूथर संतति की शिक्षा दीक्षा के विषय में चाणक्य का शिष्य था। उसका भी यही सिद्धांत था कि "लालने बहवो दोषा ताड़ने बहवो गुणा तस्मात् पुत्रश्च शिष्यश्च ताडयेन्न तु लालयेत्"। यद्यपि बड़े होने पर मार्टिन लुथर भी उपरोक्त सिद्धान्त के पक्ष में हो गया था और उसके बहुत से ऐसे वचन उद्धृत किये जा सकते हैं जिससे यह स्पष्ट है कि उनकी परिपक्व बुद्धि ने 'चटकन मुख भंजन' से बढ़कर दूसरी बालरोगौषध नहीं ढूंढ पायी थी परन्तु तब भी जब ये औषध उन्हें स्वयं पीनी पड़ती थी तब वो इसे बड़ी असहनीय और कड़ुई मानते थे। जो कुछ भी हो मार्टिन लुथर के माता पिता तनिक २ से दोषों के उपसंहार में इनकी (लगुडिमुष्टिकाहस्तपादप्रहारैः) अच्छी खबर लेते थे। यहाँ तक कि मार्टिन लुथर लिखता है कि "बाल्यकाल के ऐसे कठोर जीवन ने आगे चलकर साधु होने में मुझे अधिक सहायता दी"।

मार्टिन लूथर ग्राम पाठशाला को भेजे गये। इस पाठशाला का वर्णन मार्टिन लूथर स्वयं यों करते हैं, ' पाठशाला क्या थी छोटी मोटी कारागार थी यदि नरकशाला या पापशोधन स्थान (Purgatory) कहें तब भी अत्युक्ति न होगी। गुरु जी तो साक्षात् यम के वंशज थे। सारी शिक्षा मारने पीटने ही तक परिमित थी इत्यादि "विद्यार्थियों को मार्टिन लूथर सच्चे धर्मार्थ प्राण त्यागियों (Genuine Martyrs) की उपाधि देते हैं। इस सब शरीर कष्ट के बाद भी लडका जो कुछ पढ पाता था वह "बिलकुल नहीं के" बराबर था। " क्या यह वास्तव में कष्ट की बात नहीं है" महात्मा लूथर कहते हैं "कि बीस या इससे भी अधिक वर्षों तक परिश्रम करने के बाद लडके को केवल इतनी गलत पलत लेटिन (संस्कृत) आजाय कि वह एक पादडी होकर येन केन 'प्रकारेण 'मास' कहता फिरे।

१४ वर्ष की अवस्था में लूथर मैजबर्ग के स्कूल में भेजे गये और इसके एक वर्ष बाद ईसनैक के स्कूल भेजे गये। इन उत्तरोत्तर अच्छे स्कूलों में आने से इनकी मानसिक शक्ति का अच्छा विकाश होने लगा और धीरे २ उनके हृदय में ये प्रश्न उठने लगे "कोऽहं कस्य च संसारो" इत्यादि। मैजबर्ग का एक वर्ष घटना रहित है। यहां इनको खाने के लिये घरघर जाकर भीख मांगनी पडती थी। लूथर का कथन है कि हमीं को नहीं वरन् अमरों के लडकों को भी यही करना पडता था। कहा जाता है कि एक रोज कठिन ज्वर से पीडित लूथर अकेले अपने कमरे में थे। पिपास लगने पर ये रेंगते २ घड़े के पास पहुचे। ठढा पानी खूब पेट भर के पिया। आकर

सो रहे, आते ही नींद ने घर दबाया। जब उठे तो पाते हैं कि रोग दोष का कहीं नाम नहीं है। ईसनैक के स्कूल के गुरू के विषय में कहा जाता है कि जब वह पाठशाले में आता तो टोपी उतार लेता था। पूछने पर उत्तर देता कि हमें इन बालकों की गुप्त शक्तियों का आदर करना चाहिये। इनमें से कोई तो एक दिन जज कोई मजिस्ट्रेट और कोई दूसरे ऊंचे पदों पर होगा।

सन् १५०१ ईसवीमें १८ वर्ष की अवस्था होने पर मार्टिन लूथर एरफर्ट के विश्वविद्यालय को भेजे गये जो उस समय जर्मनी के सर्वोत्तम विश्वविद्यालयों में से था। लूथर के पिता की यह तनिक इच्छा न थी कि लूथर पादड़ी हो। उसने इन्हें एरफर्ट कानून सीखने को भेजा था। कानून में इन्होंने बहुत उद्योग किया बहुत कुछ सफलता भी प्राप्त की परन्तु इनकी आत्मा कानून की सूखी हड्डियों से शान्त न होती थी। एरफर्टमें लूथर की जीवनी मैथीसियस यों वर्णन करता है "यद्यपि वह (मार्टिन लूथर) प्रकृति से एक प्रसन्नचित्त हृदयग्राही युवक था तब भी वह सदा प्रार्थना करके गिरजा जाकर और फिर प्रात काल ही से अपने पठन पाठन में लग जाता था क्योंकि उसका सिद्धान्त यह था कि अच्छी तरह ईश्वर प्रार्थना करना मानो आधे से अधिक सबक याद कर लेना है" लूथर न तो कभी अधिक देर तक सोता रहता था न नागा करता था। गुरू से प्रश्न बहुत पूछता था और पाठशाला के समयोपरान्त पुस्तकालय में पुस्तकें देखा करता था। उसने लैटिन भाषा के प्रसिद्ध ग्रन्थकार जैसे सिसरो, वर्जिल, लिवी आदि की पुस्तकें पढ़ीं थी। अभी तक ग्रीक भाषा में मार्टिन लूथर ने

प्रवेश नही किया था। इसके बाद भी मार्टिन लूथर को ग्रीक भाषा का वैसा ज्ञान न था जैसा लैटिन का। अरस्तू ही एक ऐसा ग्रीक ग्रंथकार है जिससे मार्टिन लूथर को विशेष परिचय था। मैथोसियस कहता है कि "एक दिन जब वह पुस्तकें लौट रहा था, शायद इस मतलब से कि भली बुरी किताबों का भेद जान सके, कि अचानक उसे एक लैटिन भाषा की बाइबिल मिलगई जिसे उसने अपने जीवनमें पूर्व कभी भी नहीं देखा था

"लूथर भी उपरोक्त विषय का यों समर्थन करता है "आज के तीस वर्ष पूर्व बाइबिलों * को कोई जानता न था जब तक मैं बीस वर्ष का न था मैंने बाइबिल देखी भी न थी।

*पुस्तक छापने की विधि प्रथम २ जान गुटेन्वर्ग ने १४३६ ईस्वी में आविष्कृत किया। इससे भी पूर्व लकड़ी पर मुद्री तस्वीरें और लिखे हुए वाक्य के वाक्य छापने का उद्योग किया गया था परन्तु अलग अलग अक्षरों को जोड़कर (जो हटाये बैठाये जासकें) छापने की विधि किसी ने नहीं सोची थी। जान गुटेन वर्ग एक दरिद्र मनुष्य था अत उसने जान फास्ट और पीटर शाफर की सहायता मांगी। पीटर शाफर बहुत सुन्दर लिखता था अत उसे तो अक्षर बनाने का काम दिया गया और फास्ट को रुपया जुटाने का काम दिया गया। इन्होंने छापने की स्याही भी आविष्कृत की। १४५७ ईस्वी में प्रथम लैटिन पुस्तक छपी और १४६२ में प्रथम वार वाइबिल छपी। फास्ट ने गुटेन वर्ग को गहरा धोखा दिया। फास्ट को जब छापे का भेद ज्ञात होगया तो उसने अपना उधार दिया रुपया गुटेन्वर्ग से मांगा। गुटेन्वर्ग देने में असमर्थ हुआ। फास्टने नालिश कर छापाखाना आदि कुड़क करा लिया। गुटेन्वर्ग को भाग जाना पड़ा। तब फास्ट और शाफर ने मिलकर बाइबिल छापना प्रारंभ किया। बहुत शीघ्रता से एक दूसरे से मिलती जुलती बाइबिलें बिकते देख लोगों ने गप उड़ा दी कि फास्ट तो भूतों से मिला है और उनके द्वारा बाइबिल बनवा धन कमाता है।

अंत में मुझे * पुस्तकालय में एक बाइबिल मिलगई, उसे मैं पढता था और डाकृर स्टोपिज़ को बडा † अचंभा होता था।



* आज कल जब कि गुदड़ी बाजार में सारी पुस्तकें एक तरफ और बाइबिल अकेली एक तरफ वाली दशा होरही है तब मार्टिन लूथर का उपरोक्त कथन एक गल्प मात्र सा मालूम पडता है परन्तु बात यह है कि वास्तव में एक समय था जब लूथर का कथन अक्षरशः सत्य था। यद्यपि छापे की विधि का आविष्कार हो चुका था परन्तु तब भी लूथर के समयतक छपी पुस्तकें उतनी ही कम थीं जैसे आज कल हाथ की लिखी पुस्तकें वो गिरजा धन्य समझा जाता था जहाँ एक हाथ की लिखी बाइबिल जंजीर से बंधी, बीच टेबिल पर रक्खी रहती थी। इस तरह से सुरक्षित बाइबिल का एक वाक्य भी पढ़ लेना मानो हबड़े के स्टेशन पर फर्स्ट क्लास का टिकट खरीदना था।

† एक ग्रंथकार यों लिखता है

"I have in my youth seen an ungerman German Bible without doubt translated from the Latin it was dark and obscure For at that time learned men set almost no store by the Bible My father had a German book of homilus (Postille) in which besides the Sunday Gospels some passages of the Old Testament were expounded, out of it I have often read to him with pleasure "How gladly," said my father "should I see a complete German Bible"

दूसरा परिच्छेद

मार्टिन लूथर का संन्यासी होना

लूथर एकबार अपने माता पिता को देखने मेंसफील्ड गये। कुछ लोगों का कहना है कि इस पितृ दर्शन का वास्तविक कारण यह था कि एरफर्ट में एक प्रकार की महामारी ने आकर अपना अड्डा जमाया था। मार्टिन लूथर एरफर्ट को लौट रहे थे कि बीच ही में स्टाट रहीम ग्राम के पास इन्हें एक घोर विपत्ति का सामना करना पड़ा। बड़ी भयंकर आंधी ने उठ कर अंधेरा कर दिया इन्द्रदेव एक गरीब पथिक के प्राण लेने को यहां तक उतारू होगये कि जल वृष्टि के साथ ही साथ पाषाण वृष्टि भी करने लगे। निकट कोई शरण योग्य स्थान न था। मृत्यु मुंह बाये सामने खड़ी थी। पुराने जीवनी लेखकों का कथन है कि इसी समय बिजली गिरी और लूथर के निकट ही उसका नवयुवक मित्र अलकसियम इद्रयजू का आखेट हुआ। लूथर स्वयं घोड़े से गिर पड़ा। परन्तु आधुनिक ग्रंथकार अलकसियस की मृत्यु की घटना असत्य मानते हैं। जो कुछ भी हो सत्य यह है कि मार्टिन लूथर के प्राण ऐसे संकट में फंस गये थे कि उन्हें जीवित एरफर्ट लौटने की आशा न रही थी। इसी घबड़ाहट में मार्टिन लूथर कह उठे "पवित्र एन! बचाओ बचाओ यदि आज बचा तो सन्यासी हो जाऊंगा"।

मार्टिन लूथर के प्राण बच गये। ये सकुशल एरफर्ट पहुंचे।

इन्हें स्वस्थ होते ही अपनी प्रतिज्ञा का स्मरण आया। स्मरण आते ही इन्हें अपनी प्रतिज्ञा पर बड़ा पश्चात्ताप हुआ क्योंकि लूथर जानते थे कि उनके माता पिता को इस प्रतिज्ञा के पूरी करने से बड़ा कष्ट होगा। एक ओर तो निराशामय और अश्रु पूर्ण पिता का मुख और दूसरी ओर ईश्वर के सम्मुख की हुई प्रतिज्ञा दोनों का ध्यान आते ही लूथर की भी 'भई गति साप छुछू दर केरी'। अत में लूथर ने निश्चय कर लिया कि प्रतिज्ञा निबाहनी होगी।

एक पक्ष (पखवारे) तक हृदय से युद्ध कर लूथर ने अपना प्रण निबाहने का दृढ संकल्प कर लिया। अन्त में लूथर ने अपने सब प्यारे मित्रों का निमत्रण किया। सगीत जो लूथर को इतना प्रिय था आज अन्तिमवार मित्रों के साथ खेला गया। लूथर ने सब को अभिवादन कर उन से विदा ली। लूथरके सब मित्र उसे आगस्टाइन मठ तक पहुचाने गये। अतमें लूथर ने यह कहकर उन से विदा ली, मित्रो ! आज आप लोग मुझे देखते हैं फिर कभी न देखियेगा"। व सब निरुत्तर खड़े रहे। न्हें आगे चलकर लूथर कहते हैं "मुझे कभी आशा न थी कि मठ मैं कभी त्यागू गा। ससार के लिये वास्तव में मैं मृत हो चुका था। परन्तु ईश्वर की इच्छा थी, टटेजेल और उसके इन्डल जेन्सों* (Indulgence) ने मुझे बाहेर निकाला"।

जब यह समाचार हैंस लूथर को मिला तो उसके क्रोध और दुःख का ठिकाना न रहा। जब से लूथर एम० ए० पास हुआ था तब से उसका पिता उसे 'तुम' कहके सबोधन

* इन्डल जेन्सों का प्रकरण अन्यत्र

करता था। परन्तु इस समाचार को पाते ही उसने फिर वही पुरानी परिपाटी 'तू' द्वारा संबोधन करना प्रारम्भ किया मानों हँस लूथर ने मार्टिन लूथर को ऐसी मूर्खता करते देख उचित समझा कि लूथर का एम० ए० का प्रमाण पत्र छीन लिया जाय। हँस लूथर का यह क्रोध फिर तबही शांत हुआ जब उसने महन्त लूथर को 'सुधारक' लूथर में परिवर्तित पाया।

आगस्टियन मठ लूथर जिसके महन्त हुए थे, अपनी प्रथा के अनुसार किसी संपत्ति का प्रभु नहीं हो सकता था। इङ्गलिस्तान में 'मार्टमेन' कानून के अनुसार किसी मठ को स्थावर संपत्ति का अधिकारी होने का अधिकार न था। ये महन्त घोर दरिद्रता में अपना जीवन व्यतीत करने का आदर्श रखने वाले थे। लुथर को अभी वर्ष डेढ़ वर्ष तक अपनी दृढता की परीक्षा देना पडी। हँस लूथर को दृढ़ आशा थी कि लूथर इस परीक्षा से घबडा कर लौट आवेगा। लूथर को मठ का नीच से नीच कार्य करना पडता था और शहर भर में जाकर भिक्षा मांगनी पडती थी। लूथर भी घोर से घोर तप करने लगा। वह निराहार रहता,दिन भर प्रार्थना किया करता, पत्थर की शिलाओं पर सोता, सदा अपने को पापी स्वीकार करता था और अनेक अनेक प्रकार की यत्रणाओं से अपना शरीर* सुखाया करता था। लूथर को इतने से भी संतोष न हुआ। अब वह केवल बाल की बीनी कमीच पहिनते और घंटों अपने शरीर

* शरीर आत्मोन्नति का बाधक है अत शरीर सुखा डालना आत्मोन्नति की प्रथम सीढ़ी है इन विचारों ने माध्यमिक काल के ईसाईयों को बेतरह सता रखा था।

की सोटों से पूजा किया करते थे। लूथर के अन्य सहवासी समझते थे कि वास्तव में बहुत दिनों के बाद एक सच्चा महन्त उनके मठ में आगया है।

लूथर की परीक्षा अवधि समाप्त हुई। दीक्षा का दिन आया। हैंस लूथर को मार्टिन लूथर की दीक्षा के दिन निमंत्रण गया। हैंस किसी प्रकार भी उस उत्सव में सम्मिलित होना स्वीकार न करता था, परन्तु मित्रों के बहुत अनुनय विनय करने पर किसी प्रकार राजी हुआ। दीक्षा वाले दिन २० घोड़सवारों सहित हैंस लूथर मठ को पहुंचा और मार्टिन लूथर को बहुत से रुपये उपहार स्वरूप में दिये। लूथर अपने पिता को इस प्रकार प्रसन्न देख बड़े प्रसन्न हुए और भोज के समय सब के समक्ष अपने पिता से पूछने लगे कि भगवन्! आपने इसके पूर्व हमारे महन्त होने में इतने विघ्न क्यों डाले थे ?" अब तो पिता से न रहा गया। उसने तुरत पूछा "क्यों! विद्वानो! क्या आपने धर्मग्रंथों में यह नहीं पढ़ा कि पुत्र को अपने माता पिता की आज्ञा माननी चाहिये"। महन्तों को कोई उत्तर न सूझा। सब एक स्वर हो कह उठे "ईश्वर की इच्छा ऐसी ही थी ईश्वर की आज्ञा यही है"। हैंस लूथर —"परन्तु पिता कहीं ऐसा न हो कि यह शैतान का बहकाया हो"।

इसके बाद १५०८ में लूथर को विटेनबर्ग के विश्वविद्यालय में एक आचार्य का पद मिल गया। विटेनबर्ग का विश्वविद्यालय सैक्सनी के राजा फ्रेडरिक 'बुद्धिमान' ने १५०२ में स्थापित किया था। इस समय तक लूथर कहता है कि "मैं पक्का यहां तक कि पागल* पोप भक्त था। मैं अभी तक पोप

* पोप के इतिहास के लिये तीसरा प्रकरण देखो

मन्त्रों से ऐसा मुग्ध था कि यदि कोई तनिक भी उनकी (पोप मन्त्रों की) सत्यता में सदेह करता तो मरने मारने को उतारू हो जाता"। फ्रेडरिक इलेक्टर * भी सच्चा रोमन कैथलिक था और उसे यह स्वप्न में भी विचार न था कि यही 'विश्वविद्यालय पोप लीला को भस्म करेगा, यहीं उस कुल्हाडी पर शान रक्खी जायगी जो पोप वृक्ष को काट गिरायेगी। परन्तु यह सदा का नियम है कि मनुष्य सोचता कुछ और है परमात्मा करता कुछ और है।

सन् १५११ ई० में अगस्टाइन मठ को पोप के पास अपने दो प्रतिनिधि भेजने की आवश्यकता हुई। मार्टिन लूथर और जानवान मिचलिन इस कार्य के लिये चुने गये। दोनों मनुष्य "पवित्र नगर" रोम की ओर चल पड़े। उन दिनों न रेल थी न तार। सडकें एक तो बहुत कम थीं और जो थीं वे भी ऐसी टूटी फूटी कि उस पर चलनेवाले सदा अपने अंग भंग भय से कंपित रहते थे। बैलगाडी घोडागाडी निश्चय चलते थे परन्तु उनका किराया सामान्य स्थिति के मनुष्य के लिये देना असंभव था। इन दोनों गरीब महतों को अपने पैरों का भरोसा कर पैदल ही चलना पडा। ये लोग दिन भर चलते सन्ध्या को किसी गरीब किसान के झोंपडे या ग्राम-गिरजे में आश्रय लेते और उन्हीं लोगों का आतिथ्य स्वीकार करते। मार्ग के कठिन कष्टों को सहन करते हुए ये लोग मिलन नगर पहुंचे। मिलन के गिरजे में इन्हें पूजा करने का अधिकार न मिला

* इलेक्टर का प्रकरण अन्यत्र मिलेगा

क्योंकि ये अग्रोसियन* सम्प्रदाय के न थे। लूथर को मिलन आकर यह प्रथम बार मालूम हुआ कि ईसाई धर्म ऊपरही से देखने को एक है, भीतर ही भीतर इनके अनेकों टुकडे होते जाते हैं। अंत में छ सप्ताह के बराबर परिश्रम के बाद 'पवित्र नगर' की उच्च अट्टालिकायें दिखाई पडने लगीं, गिरजों की चोटियां दृष्टिगोचर होने लगीं। भक्ति पूर्ण लूथर इस दृश्य को देखते ही घुटने टेक पृथ्वी पर बैठ गया और "पवित्र नगर" को बारम्बार प्रणाम करने लगा।



* हिन्दुओं की तरह ईसाइयों में भी अनेक मतमतान्तर और सम्प्रदायें हैं। मुसलमान धर्म भी इस रोग से नहीं बचा है।

तृतीय परिच्छेद

पोपों की महिमा

लूथर की जीवनी का महत्व समझने के लिये, उसके कार्य की गुरुता का ज्ञान प्राप्त करने के लिये हमें थोडा सा ज्ञान उसके समय की धार्मिक तथा राजनैतिक स्थिति का भी होना चाहिये। हर एक सुधार जो पुराने समय में हुए हैं, वे व्यर्थ से प्रतीत होते हैं यदि हम उन्हें उनके समय की आवश्यकताओं के अनुसार न देखकर अपने समय की आवश्यकताओं के अनुसार देखें। हर एक वस्तु को समझने के लिये यह परमावश्यक है कि हम उन कारणों को समझें जो उस वस्तु की उत्पत्ति के पूर्व विद्यमान थे और जिन कारणों से वह वस्तु कार्य स्वरूप में उत्पन्न हुई है।

हम इस प्रकरण में अति सक्षेपत यह दिखाने का उद्योग करेंगे कि पोपों की उत्पत्ति किस प्रकार हुई, किस प्रकार इन्होंने अपना प्रभाव धीरे २ बढाया और अंत को किस प्रकार इनके अत्याचारों के कारण इनका पतन आरंभ होगया। लूथर और लूथर जनित प्रोटेस्टेंट धर्म वास्तव में उन सब कारणों का मुखिया है जिनके द्वारा पोपलीला इस ससार से उठगई। लूथर का पोप लीला से इतना घनिष्ट सबन्ध है कि पोप लीलाका वर्णन किये विना लूथर की जीवनी समाप्त करना मानो रावण कानाम लिये बिना ही रामायण लिखना है। यही कारण है कि लूथर को प्रणाम करते छोडा हमें थोडी देर के लिये

अपना ध्यान दूसरी ओर खींचना पड़ता है।

रोमन कैथालिकों का कथन है कि ईसामसीह ने स्वयम् अपने पीटर नामक शिष्य को अपने सब शिष्यों में श्रेष्ठ माना। पीटर ही में ईसा ने धार्मिक विश्वास अधिक पाया पीटर ही में आत्मोत्सर्ग अधिक पाई। पीटर सब शिष्यों में श्रेष्ठ था अत पीटर द्वारा स्थापित गिरजा भी सब गिरजों में मुख्य है। ईसा मसीह की मृत्योपरान्त पीटर रोम नगर गया और वहां उसने एक गिरजा स्थापित किया। इस गिरजे की मुख्य महन्ती पीटर स्वयम् २५ वर्ष तक करता रहा। ६७ ईस्वी में उसे अपने धर्मार्थ प्राण त्यागने पड़े। पीटर के बाद अन्य महन्त उसके गिरजे के महन्त होते गये। इन सब महन्तों को अपने धार्मिक विश्वास के लिये बड़े बड़े कष्ट उठाने पड़े और बहुधा यहां तक नौबत आती थी कि पीटर की तरह इनको भी अपने प्राणों से हाथ धोना पड़ता था। रोमन लोगों के पुराने धर्म और ईसाई धर्म के बीच ५०० वर्ष तक घोर युद्ध होता रहा। इस धर्म-युद्ध में लाखों मनुष्यों के व्यर्थ प्राण गये। ईसाई धर्म की जीत हुई और पूर्वीय रोम का सम्राट् कांस्टेंटाइन स्वयम् ईसाई होगया। यही पहला ईसाई सम्राट् था। इसके बाद से ईसाई धर्म राज धर्म होगया। पीटर के उत्तराधिकारी पोपों ने इस धर्म-युद्ध *में बड़े २ कष्ट उठाये परन्तु सहिष्णुता धैर्य तथा दया

* धर्म युद्ध से हमारा तात्पर्य वास्तविक युद्ध से नहीं है जैसा ३० वर्ष वाले युद्ध में हुआ था। हमारा तात्पर्य इतना सा है कि ईसाई लोगों की संख्या बराबर बढ़ती और पुराने धर्म के अनुयायियों की संख्या बराबर घटती जाती थी। जिसका बदला ये लोग ईसाइयों को सता कर लेते हैं।

न त्यागी। इन्हीं लोगों के सद्गुणों तथा त्याग का यह फल था कि ईसाई धर्म की जीत हुई। जब ईसाई धर्म राजधर्म हो गया तब पोपों का भी प्रभाव बहुत बढ़ गया और उस समय के पोप इसके सर्वथा योग्य भी थे। पोपों ही के सतत् उद्योग का यह फल है कि सारा योरप आज ईसाई है।

कांस्टेंटाइन ही के समय में रोम साम्राज्य की राजधानी रोमनगर से उठ कर बिजैंटियम् गई। बिजैंटियम् उस समय से सम्राट् कांस्टेंटाइन के नामानुसार कांस्टेंटीनोपुल कहा जाने लगा। राजधानी के उठ कर कांस्टेंटीनोपुल चले जाने से रोम नगर में अंधेरा सा होगया। ऐसी अवस्था में प्राकृतिक था कि रोम में रहने वाले पोपों का प्रभाव प्रजा पर और बढ़े। कांस्टेंटाइन के वंशज दिन २ निःशक्त होते गये अतः इतने बड़े साम्राज्य का संगठित रहना असंभव होगया। जर्मनी की असभ्य जातियां जो सदा से रोम साम्राज्य हड़पने के उद्योग में लगरही थी अब पश्चिमी रोम साम्राज्य को निःशक्त और अकेला पा उस पर टूट पड़ी और इस तरह पूर्वी रोमन साम्राज्य पश्चिमी रोमन साम्राज्य से सदा के लिये पृथक् होगया। पश्चिमी रोमन साम्राज्य, सारा योरप जिसके अन्तर्गत था, अब जर्मनी की भिन्न २ जातियों में विभक्त होगया। ये जातियां सर्वदा परस्पर लड़ा करती थीं और एक दूसरे का नाश किया करती थीं।

यद्यपि रोमन साम्राज्य नष्ट हुआ परन्तु ईसाई धर्म की जीत हुई। जर्मनी की सब असभ्य जातियों ने ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया। १२ वीं सदी तक सारा योरप ईसाई होगया। ये सब नव शिष्य पोप ही एक ऐसा व्यक्ति था

जिसका सम्मान करते थे। इस तरह पोप एक प्रकार से सारे योरप के मान्य होगये। इस ही बीच में ईसाई संसार में एक बड़ा विवाद खड़ा होगया। कुछ लोगों ने कहा ईश्वर और ईसामसीह में कुछ भेदही नहीं है कुछने कहा कि ईश्वर और ईसा में भेद है। फल यह हुआ कि सारा ईसाई संसार दो भागों में विभक्त होगया —(१) रोमन चर्च (२) और ग्रीक चर्च। पोप के अनुयायी रोमन चर्च वाले या रोमन कैथलिक कहेजाने लगे। इस धर्म विभाग का फल भी यही हुआ कि पोप लोग धार्मिक विषय में भी सर्वोपरि और स्वतन्त्र हो गये। यहाँ तक तो पोप पद की उन्नति प्राकृतिक घटनाओं वश हुई जिसमें पोपों का कुछ भी वश न था परन्तु अब पोपों को अपनी उन्नति करने की चाट पड़ गई।

आठवीं सदी में (charlemagne) शार्लमेन नामक एक बड़ा वीर राजा योरप में हुआ। इसने सब छोटी २ परन्तु परस्पर लड़ने वाली जातियों को वश में कर एक महान साम्राज्य स्थापित किया। इस ही बीच में (सन् ८०० में) पोप लियो तृतीय को, उसके शत्रुओं ने जब पोप बड़ी धूमधाम से रोम नगर में होकर जा रहा था, घोड़े से उतार कर पृथ्वी पर पटक दिया और आंख निकाल कर जीभ काट लेना चाहा। रुधिर से लथ पथ पोप पास के मठ में पहुंचाया गया। शार्लमेन ने जब ये बात सुनी तो बड़ा क्रोधित हुआ और तुरत इटली को चल पड़ा। इटली पहुंच कर उसने अपने धर्म गुरु के शत्रुओं की खूब खबर ली। ईश्वर की कृपा वश पोप भी अच्छा हो गया और उसने शार्लमेन का अपने हाथ से राज्याभिषेक कर उसे सारे योरप का सम्राट् बनाया और उसके

साम्राज्य को पवित्र रोमन साम्राज्य के नाम से विभूषित किया। योरप के इतिहास पर इस घटना का बडा प्रभाव पडा है। इस घटना के बाद से पोप की पदवी साम्राट् से भी ऊंची मानी जाने लगी और पोपों का यह अधिकार हुआ कि भविष्य में जिसे वे अपने हाथों राज्याभिषिक्त करें वही वास्तविक जर्मन सम्राट है।

पोपों ने अपने इस अधिकार को धर्म शास्त्र सम्मत् बनाने का उद्योग करना प्रारम्भ किया। बाइबिल में लिखा है कि ईसा ने एक बार कहा कि "जिसके पास असि न हो उसे चाहिये कपडे बेचकर असि क्रय करे" तब शिष्य ने कहा "भगवन्! यहां तो दो असि हैं" ईसा ने उत्तर दिया "बस ये पर्याप्त हैं"। इन बाइबिल वाक्यों का यह अर्थ किया गया कि" भगवान् ईसामसीह ने अपने गिरजेका अत. उस गिरजे के नायक पोप को, दो प्रकार की असि दीहै (१) धार्मिक (२) सांसारिक। धार्मिक असि के प्रभाव से पोप समस्त ईसाई ससार का धार्मिक विषय मे सर्वोपरि गुरु हुआ। सांसारिक असि के प्रभाव द्वारा पोप समस्त ईसाई ससार का सम्राट हुआ। अत सब भौतिक सम्राट पोप से नीचे है और पोप सम्राटों का सम्राट है। पोप ऐसे धार्मिक व्यक्ति के लिये यह अनुचित जान पडता है कि वह सासारिक विषयों में लिप्त हो अत पोप ने अपनी प्रसन्नता पूर्वक अपना सासारिक अधिकार ससार के सम्राटों को सौंप दिया है जो पोप के प्रतिनिधिवत् ससार का राज्यकार्य चलाते हैं। अत पोप को पूर्ण अधिकार है कि जब चाहे वह जिस सम्राट् को राज्यच्युत कर दें और जब चाहें जिसे किसी देश का सम्राट् बना दें क्योंकि पोप ही

एक मात्र प्रभु ईसामसीह का प्रतिनिधि है"।

उपरोक्त सिद्धान्त निरा पुस्तकस्थ सिद्धान्त मात्र न था। जैसा आगे चल कर दिखाने का उद्योग किया जायगा पोप सदा इस सिद्धान्त के कार्यपरिणत होने के उद्योग में लगे रहते थे और बहुत कुछ सफल मनोरथ भी होगये थे कि इतने में लूथर महाशय रणागन में कूद पड़े और पोपों के पैर फिसल गये।

हमने ऊपर सक्षेपत यह दिखाने का उद्योग किया है कि किस प्रकार पोप पद धीरे २ ईसाई ससार में सर्व मान्य होता गया। अब आगे चल कर हम यह दिखावेंगे कि सासारिक वैभव और शक्ति का मदिरा पीकर पोप किस प्रकार उन्मत्त हो उठे और किस प्रकार उन्होंने योरप की भिन्न २ जातियों के स्वतन्त्र सम्राटों को अपनी आज्ञा मानने के लिये अपमानित करना प्रारम्भ किया।

जर्मनी के सम्राट् हेनरी चतुर्थ और उनके कुछ सामन्तों में मत भेद हुआ। सामन्तों ने पोप के पास अपील की कि आप हमारी रक्षा कीजिये। उस समय पोप था ग्रेगरी सप्तम्। उस का अभिमान पोप होने के कारण आकाश चूमता था। कोई सम्राट् क्यों न हो, होगा अपने देश का सम्राट् होगा, पोप के आगे तो उसका कोई मूल्य है नहीं। उसने तुरन्त हेनरी चतुर्थ के नाम सम्मन भेज दिया कि आप रोम आइये आप और आपके सामन्तों के बीच हम न्याय करेंगे। हेनरी चतुर्थ इस सम्मन को पा हसने लगा और उसने कहा कि एक दिन वो था कि जब हमारे पूर्वज शार्लमेन ने पोप और उसके शत्रुओं का न्याय किया था आज पोप का यह घमंड है कि वह उस ही शार्लमेन के

प्रजा का दमन करने ही में जर्मन सम्राट् की शक्ति नाश हुआ करती थी। पोप ने फ्रेडरिक को*क्रूसेड नामक युद्ध पर जाने को विवश किया। पोप की आज्ञा कब लांघी जा सकती थी। फ्रेडरिक को विवश हो क्रूसेड के लिये तय्यार होना पड़ा। परन्तु बीचही में फ्रेडरिक बीमार पड़ गया। क्रूसेड में देर होते ही, पोप के क्रोध का कुछ ठिकाना न रहा। उसने तुरत फ्रेडरिक को बहिष्कृत कर दिया। फेड्रिक ने तीन बड़े पादड़ी पोप के पास यह विश्वास दिलाने को भेजा कि मैं वास्तव में बीमार हूं। परन्तु पोप ने जिसकी हार्दिक इच्छा सम्राट् को नीचा दिखाना मात्र थी, इन पादड़ियों से मिलना अस्वीकार किया। यह घटना सन् १२२७ की है।

पोपों की यह क्षमता जर्मनी तक परिमित न थी। समस्त ईसाई योरप के सम्राट् पोपों के आगे मस्तक झुकाते थे। इङ्गलेन्ड के राजा हेनरी द्वितीय को †टामस बेकेट की समाधि के

* १२ और १३ वीं सदी में ईसाई योरप को जेरुसलम नामक स्थान तुर्कों से छीन लेने की बड़ी इच्छा हुई। सात बार योरप ने एशिया पर चढ़ाई की परन्तु तुर्क सदा विजयी हुए और ईसाई जेरुसलम न ले पाये। इन्हीं युद्धों को क्रूसेड कहते हैं।

† पादड़ी लोगों का विचार समान न्यायालय नहीं कर सकते थे। यदि एक घर गृहस्थ किसी की स्त्री को भगा ले जाय, व्यभिचार करे या किसी की हत्या करे तो राजा द्वारा स्थापित न्यायालय से उसे दंड मिलता था और निष्पक्ष न्यायवश पूरा दंड मिलता था। परन्तु यदि येही उपरोक्त पाप किसी पादड़ी या महन्त से बन पड़े तो उसका न्याय अन्य पादड़ी तथा महन्तों की सभा द्वारा होता था। पादड़ियों की सभा ने यदि बहुत कड़ा दंड दिया तो कह इसको एक सप्ताह तक पश्चाताप करना पड़ेगा अथवा एक महीना तक बंद

सामने घुटने टेक कर पश्चाताप करना पडा था जब कि खुली पीठ पर पादडी लोग धडाधड चाबुक लगा रहे थे। इसही तरह इङ्गलेन्ड के राजा जान ने पोप के भेजे हुए पादडी को अपने यहाँ (Archbishop) सब से बडा पादडी बनाना अस्वीकार किया। पोप का कोई राजा कहा न माने! पोप ने अपना ब्रह्मास्त्र चला दिया। जान को बहिष्कृत कर दिया और फ्रांस के राजा को आज्ञा दी कि वह जान को सिंहासन से उतार कर स्वयम् इगलैंड का राजा बन जाय। फ्रांस के राजा फिलिप द्वितीय इगलैंड जीतने चल पडे। इधर अंगरेज 'बहिष्कृत' राजा जान का मुख देखने से भी घृणा करने लगे कि कहीं नर्क न जाना पडे। बिचारा जान तुरत पोप के प्रतिनिध के पास

कोठरी म बैठकर ईश्वर के सामने पाप स्वीकार कर उससे क्षमा मांगनी पड़ेगी। [यही नहीं बरन् पाप के भंडा फोड होने के पहिले ही यदि पापी पादडियों के मठ में सम्मिलित हो जाय तो भी वह बच जाता था और राज कर्मचारी खिसिया के रह जाते थे—(सम्पादक)

ऐसे घोर पापों का ऐसा सीधा दंड मिलने के कारण पादड़ी तथा महन्तों में पाप करने की प्रवृत्ति दिन २ बढ़ती जाती थी। हेनरी द्वितीय ने इस प्रथा के विरुद्ध पादडी तथा महन्तों को भी राज न्यायालय द्वारा दंडित होने की आज्ञा निकली। पादडियों ने टामस बेकेट की नायकता में, इसका घोर विरोध किया। एक दिन हेनरी टामस बेकेट की उद्दंडता पर बड़ा क्रोधित हुआ और चिल्ला २ कर कहने लगा कि "इस दुष्ट पादडी से हमारा कौन पिंड छुडावेगा।" दो सिपाहियों ने उसे यह कहते सुन लिया और तुरन्त जाकर टामस बेकेट का वध कर डाला। पादड़ी जो अपने को पोप ही के नीचे मानते थे और राजा को कुछ न गिनते थे बिगड खड़े हुए। धर्मान्ध प्रजा ने भी उनका साथ दिया और हेनरी को अपना सिंहासन बचाने के लिये सरे बाज़ार चाबुक खानी पड़ी।]

दौड़ा गया। अपना मुकुट उतार कर उसके पैरों पर रख दिया और बोला आज से हम पोप ही द्वारा प्राप्त मुकुट पहिनेंगे, पोपकी सब आज्ञायें बिना हिचकिचाये मानेंगे और प्रतिवर्ष बहुत सा धन रोम को उपहार स्वरूप भेजा करेंगे। जब पोप ने इस तरह राजा का घमंड चूर कर लिया तब उसे क्षमा प्रदान की।

पोप की सर्व श्रेष्ठ क्षमता के उपरोक्त कारणों के अतिरिक्त प्रत्येक योरोपीय देशों में बहुत बड़े २ पादड़ी सघों तथा महन्तों के मठों का होना भी एक प्रधान कारण था। ये पादड़ी सगत और महन्तो के मठ सदा यही सिखाया करते थे कि पोप राजा से भी श्रेष्ठ है। वह ईश्वर का प्रतिनिध है। उस समय में पादड़ी ही लोग अधिकतर पढ़े लिखे होते थे-अत राज्य भर में ये लोग बहुत बड़े २ पदों के अधिकारी होते थे। यद्यपि नौकरी तो ये राजा की करते थे परन्तु मानते सब से बड़ा पोप को थे। ये लोग सदा पोप की महिमा बढ़ाने के उद्योग में लगे रहते थे क्योंकि पोप पदोन्नति के साथ ही साथ पादड़ी समुदाय का भी दबदबा बढ़ता जाता था। पोप भी सदा इन पादड़ियों की रक्षा तथा उन्नति का ध्यान रखता था। पादड़ियों के झगड़ों की अपील रोम जाती थी, पादड़ियों की नियुक्ति का अधिकार पोप अपने हाथों में ले लिया चाहते थे और बहुत कुछ ले चुके थे।

पोप का पद पैतृक न होकर वरन् चुनाव पर निर्भर था। कुछ परिमित सख्या के कारडिनलों द्वारा पोप चुना जाता था। अत योरप का प्रत्येक चालाक तथा उच्चाभिलाषी पुरुष एक दिन पोप होने की आशा कर सकता था। केवल उसे पादड़ी

का वेश बनाने की आवश्यकता थी फिर क्या था बिना असि छुए ही भाग्यशाली मनुष्य उस पद को पहुँच सकता था जिसके पद पर सम्राटों के मुकुट लोटा करते थे। हाँ उस पद को पहुचने के लिये धूर्तता, चालाकी, घूस चोरी आदि गुणों की बड़ी आवश्यकता थी। कहने को तो पोपों का पद साधुओं का पद था परंतु पोप वास्तव में कभी साधु न होते थे। उनके धन वैभव तथा सौख्य सामग्री की तुलना कोई सम्राट् न कर सकता था। उनका वस्त्र, उनका भोजन, उनकी रहन सहन विधि सब सम्राटों को मात करती थीं। सिद्धान्तानुसार वे विवाह नहीं कर सकते थे परन्तु वास्तव में वे अपने को किसी सांसारिक सुख से वंचित नहीं रखते थे।



अमानुषिक पाप से न हिचकिचाता था। पोप के सिकरेटरी की हत्या करने के लिये उसके पुत्र सीजर बारजिया ने उसे दौड़ाया। वह हत भाग्य पोप की शरण में भागा। सीजर बारजिया ने वहीं जाकर उसकी हत्या की यहां तक कि उस गरीब के रुधिर से धर्म पिता धर्म गुरु अलेक्जेंडर पोप के पवित्र कपड़े बिलकुल भीज गये। सीजर को अपने बड़े भाई का हिस्सा हड़पने की इच्छा हुई। इच्छा की देरी थी कि गांडिया का ड्यूक (सीजर का बड़ा भाई) ससार से उठा दिया गया। लुक्रेशिया का पति नेपिल्स का राजा था। नेपिल्स का राज्य सीजर की आंखों में चढ़ा था। अत भाई और बहिन ने मिल कर अपने बहनोई तथा पति को खुले बाजार १८०० सन् के जुलाई मास में मरवा डाला। सामयिक इतिहास लेखकों का कथन है कि सीजर और लुक्रेशिया में भाई बहिन होने पर भी पति पत्नी का सा सम्बन्ध था। सीजर बारजिया छिपे छिपे विष प्रयोग द्वारा अपने शत्रुओं के मारने के लिये अति प्रसिद्ध है। १२ वीं अगस्त को एक भोज दिया गया जिसमें विष द्वारा कई शत्रुओं के प्राण लिये जाने वाले थे। ये विष सीजर स्वयम्

इसमें कुछ सन्देह नहीं कि सीजर बोरजिया बड़ा दुष्ट और नीच वृत्ति का मनुष्य था परन्तु ऐतिहासिक दृष्टि से उसके सम्बन्ध में कही हुई अनेक बातें सशय ग्रस्त होने से स्वीकार नहीं की जा सकती। उपन्यासकारों तथा पूर्व काल के अन्यान्य लेखकों ने उसके जीवन चरित्र को और भी कलुषित और भयानक बना दिया है। यह भी विचार लेना उचित है कि तत्कालीन इटली की राजनैतिक स्थिति से और सीजर की करतूतों से बहुत कुछ सम्बन्ध है। इटली में ही कुछ ऐसे विद्वान भी थे जो सीजर को ज्यादा बुरी दृष्टि से नहीं देखते थे। (सम्पादक)

तय्यार करना था और उनके तोड़ भी वही जानता था। धोखे से विष का पियाला बदल गया और अलेक्ज़ेंडर और सीज़र दोनों ने विष पी लिया। दोनों उसी रात को बीमार पड़े। सीज़र तो बच गया परन्तु पोप १८ वीं अगस्त को चल बसा। अभी पिता का शरीर ठंढा भी न हुआ था कि सीज़र के भेजे लुटेरों ने आकर पोप का कोष लूट लिया। पोप विष से मरा है यह बात किसी को ज्ञात न हो इस कारण उसका मृत शरीर किसी को दिखाया न गया। परन्तु ईश्वर की इच्छा विचित्र है। पोप की रथी के साथ जाने वाले पादड़ियों और सिपाहियों में झगड़ा होगया। रथी ले जाने वाले पोप की शव को छोड़ अपने प्राण बचाने में लग गये। पोप का शव खुल गया और योंहीं अकेला वहां पड़ा रहा। बस काले काले अत्यन्त घोर दुर्गंध देते हुए तथा कीड़ा पड़े हुये शव को जिसने देखा उसही को विश्वास होगया कि पोप विष से मरा है। इसके बहुत देर बाद कुछ लोगों ने आकर उस मृत पोप को (गाली दे देकर तथा उस पर थूक थूक कर) एक गड्ढे में एक दरी में लपेट कर फेंक दिया।

यह तो हुई पवित्र नगर और रोम उसके पवित्र धर्म पिता पोप की दशा! अब पोप के सैनिक पादड़ी और महन्त गण भी पोप से कुछ घटकर न थे। सिद्धान्तानुसार तो इन्हें विवाह करना मना था और स्पष्ट रीति से कोई भी किसी स्त्री से विवाह न करता था परन्तु स्त्री सुख से वंचित कोई रहना न चाहता था। फल यह था कि मठों में व्यभिचार अत्यन्त फैल गया था। यह पाप कहां तक फैल गया था इसका प्रमाण उस समय के साहित्य ही से यथेष्ट मिल जाता है। ऐसा मालूम होता

था मानो इन्द्रिय निग्रह करते करते पादड़ी गण उकिया उठे थे अत अब थोड़े दिनों के लिये इन्द्रियपरायणता ही उन्होंने अपना धर्म मान लिया था। प्राय मदन्त और पादड़ी अपने पास स्त्रियां रखते थे, उससे लड़के होतथे और सब जानते थे कि यह किस के लड़के हैं परन्तु यदि कुछ भेद था तो इतना कि ये स्त्रियां धर्मानुसार व्याही न थी। लूथर कहता है "जिस स्त्री ने पादड़ी के साथ व्यभिचार किया वह धारोधार रह गई फिर उसे कभी पापमुक्त होने की आशा नहीं रहती। पादड़ी की रखैल से बढ़कर बुरी अवस्था में और कोई स्त्री नहीं होती।"

इस पोप लीला से भले मनुष्य नितान्त दुखी हो उठे थे परन्तु किस की शक्ति थी जो धर्मपिता पोप के विरुद्ध अंगुली उठावे और यदि किसी ने उठाई भी तो उसे नास्तिक की उपाधि सहित जीते जी अग्नि में प्रवेश करना पड़ा।

कान्स्टेंस नामक स्थान में पादड़ियों की एक सभा हुई कारण कि उस समय एक नहीं तीन तीन पोप अपने को पोप कह रहे थे और इस तरह से ईसाई संसार तीन भागों में बँट रहा था। सभा इस लिये की गई थी कि सभा तीनों पोपों को पदच्युत कर एक पोप चुने और इस तरह ईसाई संसार को तीन भागों में बटने से रोके। इस सभा में एक जानहस नामक विद्वान भी आया जो प्रेग के विश्वविद्यालय में आचार्य के पद पर था। हस ने अपनी पुस्तकों द्वारा लोगों को यह बताने का उद्योग किया था कि किस प्रकार पादड़ी संसार पाप में लिप्त है। हस का विचार था कि पादड़ी संसार के सारे पापों की जड़ उसका धन, वैभव है। अत हस के मतानुसार पादड़ियों को धन कदापि न मिलना चाहिये। पादड़ियों से ये

बातें कब सही जा सकती थी। उस गरीब को बिना अपने बचाव का मौका दिये ही नास्तिक सिद्ध कर जीते जी ही जलाये जाने की आज्ञा देदी गई और वह जीते जी ही जला दिया गया। यद्यपि हस जला दिया गया परंतु उसका सिखाया सत्य न जलाया जा सका और धीरे २ लोग पोप लीला का भेद जानते गये और जैसे जैसे जानते गये वैसे ही पोप लीला का नाश करने को भी उद्यत होते गये।

जब से पश्चिम में ईसाई धर्म का प्रचार हुआ और विशेष कर १० वीं से १४ वीं सदी तक, रोमन और ग्रीक लोगों की सभ्यता लुप्त प्राय सी हो रही थी। ग्रीक और रोमन विद्वानों और उनके ग्रंथों को पढ़ना एक प्रकार से पाप सा समझा जाता था कारण कि ईसाई धर्म ने उनके हाथ बड़ा कष्ट उठाया था। दूसरे, पुराने ग्रीक और रोमन लोग थे विधर्मी फिर भला यह कब संभव था कि ईसा के भक्त विधर्मी विद्वानों की पुस्तकें पढ़ कर उन्हें अपने से बड़ा मानने पर विवश होते। पादड़ी लोग जिनका सारा वैभव जनता की मूर्खता पर निर्भर था सदा उनके कान उन विधर्मी विद्वानों के विरुद्ध भरा करते थे। *ईसाई धर्म की स्वयम् जो पुस्तकें थी उनमें व्यर्थ के धार्मिक वाद विवाद भरे थे। वैसी पुस्तकों से किसी प्रकार का मानसिक विकाश होना असंभव था। अत पश्चिम के इतिहास का यह मूर्खतामय काल इतिहासज्ञों द्वारा (Dark

*यह सब होने पर भी पादरी लोग ही अधिकांश में इन पुस्तकों को नाश होने से रक्षा करते और पढ़ते थे। (सम्पादक)

ages) "अंधकारमय काल" *के नाम से पुकारा गया है। और यही अंधकारमय काल पोपों की पदोन्नतिका काल है।

इस समय की ईसाई जनता महा मूर्ख और घोर अंध विश्वासी थी। पादड़ी लोग सदा अपना ऐश्वर्य यह बात कह कर सिद्ध किया करते थे कि हमारे पास स्वप्नों में, अकेले में, सदा स्वर्ग दूत आया करते हैं। और सब लोग इसे बिलकुल सत्य मानते थे। ठीक इसके विरुद्ध पादड़ी प्रथा के शत्रुओं के पास (पादड़ी, लोगों को, ऐसा विश्वास दिलाते थे) भूत प्रेत और शैतान आया करते थे। इस बात में भी लोग पूरा विश्वास करते थे। पादड़ियों ने यह जनरव फैला दिया कि लूथर की मा ने स्वीकार किया है कि मेरे पास रात को शैतान आता था और लूथर का गर्भ शैतान ही से रहा है। अत लूथर शैतान पुत्र है और लूथर की बात मानना मानो शैतान की बात मानना है।

अत में रात के उपरान्त प्रात काल होता ही है। एक ओर छापे की कल के आविष्कार ने पुस्तकों को छाप, विद्या का मार्ग सुगम कर दिया दूसरी ओर कान्स्टैन्टीनोपुल पतन के कारण भागे हुए ग्रीक, विद्वानों ने आकर पश्चिम में शरण ली और पुरातन ग्रीक और रोमनसभ्यता का लोगों में प्रचार किया। इस काल का नाम इतिहास वेत्ताओं ने 'पुनरुत्थान काल' (Renaissance period) रक्खा है। ग्रीक तथा लेटिन भाषा के ज्ञान, पुराने विद्वानों की पुस्तकों के परिशीलन

* अब आधुनिक ऐतिहासिक निरीक्षण द्वारा इस काल पर बहुत कुछ प्रकाश पड़ चुका है अत यद्यपि इस काल के साथ उपरोक्त विशेषण का अधिक प्रचार होने से प्रयोग होता है परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है। सम्पादक

आदि ने ईसाई जनता के चक्षु खोल दिये। इस ही समय लूथर और केलविन आदि दृढ प्रतिज्ञ विद्वानों ने धर्मसुधार का कार्य अपने ऊपर लिया। योरप की जातियों में धीरे २ जातीयता का भाव उत्पन्न होने लगा और उनके लिये यह असह्य हो गया कि उनका राजमुकुट एक विदेशीय पोप के पैरों पर लोटे। धर्म और राजनीति, धर्म और सांसारिक कार्यों का अन्तर ईसाई जातियों को समझ पडने लगा। अत अब पोप के लिये धर्म के नाम पर लूट करना असंभव हो गया। जातीयता के भाव में पग कर उस ही अंगरेज जाति ने जिसने राजा जान को पोप की आज्ञा के कारण त्याग दिया था, अब अपने राजा हेनरी अष्टम को ही अपना धार्मिकनेता माना, और पोप से नाता तोड दिया। योरप की जनता ने ३० वर्ष तक घोर युद्ध करके यह सिद्ध कर दिया कि अब पोप की महिमा अधिक नहीं टिक सकती अब पोपों का अत्याचार अधिक नहीं सहा जा सकता।

उन अनेक शक्तियों में जिनके समूह ने पोप लीला का नाश किया लूथर की आत्मशक्ति तथा दृढता एक विशेष महत्व की शक्ति थी। या यों भी कहना अनुचित न होगा कि लूथर की शक्ति उन सब शक्तियों की मुखिया थी। पोप लीला की उत्पत्ति स्थिति तथा प्रलय का वर्णन करने से (जो अत्यन्त संक्षेप में किया गया है) हमारा मुख्य उद्देश्य यही है कि लूथर के कार्य का महत्व पूर्ण रीतिसे समझा जाय और इसका ज्ञान हो जाय कि लूथर ने किन घोर कर्मों और शक्ति शाली पोपों से युद्ध-कर संसार में अक्षय कीर्ति प्राप्त की है।

पंचम परिच्छेद

लूथर रोम में

लूथर अपने चिरवांछित पवित्र नगर में आ उपस्थित हुआ। उसने वहाँ जो देखा सुना उसका वर्णन बहुत स्थानों में किया है। लूथर कहा करता था कि रोम नगर देखने से जो अनुभव मुझे प्राप्त हुआ है उसे मैं सहस्त्र स्वर्ण मुद्राओं के लिये भी बेचने को तय्यार नहीं हूँ। १५३० ईस्वी में लूथर यों लिखता है "रोम नगर देखकर मैं एक प्रकार से उन्मत्त हो उठा था। सब गिरजों, सब स्थानों को पागलों की भाँति देखता फिरता था। सब कुत्सित और असत्य बातों को सच्चे भक्त की भाँति बिना सन्देह किये विश्वास कर लेता था। मैंने इतनी बार रोम में मास (Mass)* कहे कि किसी रोम नगरस्थ महन्त ने भी न कहे होंगे। मुझे यदि कुछ शोक था तो यही कि मेरे माता पिता जीवित हैं अन्यथा मैंने रोम नगर में इतने पुण्यमय कार्य किये थे इतनी प्रार्थनायें कहीं थीं, इतने मासों में भाग लिया था कि यदि मेरे माता पिता नर्क में होते तो उन्हें सीधा स्वर्ग मिल जाता। रोम में एक कहावत है कि वो माता निश्चय धन्य है जिसका पुत्र महात्मा जान के गिरजे में शनैश्चर की मास पढ़ता है। मैं भी अपनी माता को धन्य बनाने का कितना उत्सुक था। (अर्थात् शनैश्चर को जान के

---

*मास रोमन कथालिकों की एक प्रकार की प्रार्थना विशेष का नाम है।

गिरजे में मास पढना चाहता था) परंतु करू क्या उस दिन ऐसी भीड थी कि मैं वेदी तक पहुँच ही न सका।"

रोम की उच्च २ अट्टालिकाओं और विशाल गिरजों ने लूथर के ऊपर बडा प्रभाव डाला। लूथर ने राज सी ठाठ बाट से पोप को एक गिरजे से दूसरे गिरजे को जाते देखा। यद्यपि जिस कार्यके लिये लूथर रोम भेजे गये थे उसमें तो उन्हें सफलता न हुई तब भी उन्हें पोप दर्बार देखने का सौभाग्य मिल गया। लूथर को पोप के न्यायालयो, की कार्य प्रणाली बडी दूषित देख पडी। रोम नगर की पुलीस के विषय में लूथर का कहना है कि यद्यपि वो थी तो बडी कडी परन्तु उसमें योग्यता का नाम न था। अलेकजेंडर षष्ठ तथा उनके पुत्र सीजर बारजियाके अमानुषिक अत्याचारो की कहानियों से अभी तक सारा रोम नगर गूंज रहा था। लूथर ने स्वयम् अपनी आखों पोप जूलियस द्वितीय को इटली देश में घोर अत्याचार करते देखा। लूथर तो पवित्र नगर देखने की आशा से रोम गया था परन्तु वहा जो उसने देखा सुना उससे तो रोम नास्तिकों के नगरों से भी घोरतर प्रकट होता था। उस समय का पोप जूलियस द्वितीय ठीक उसी समय वेनिस नगर जीत कर लौटा था जहा सेना सचालन कार्य उसने स्वयम किया था। लूथर ने ऐसे २ कार्डिनलों * को रोम में 'महात्मा' की पदवी से भूषित देखा जिन में यदि कोई गुण था तो यही कि वे अपनी मां बेटियों को कुदृष्टि से नहीं देखते थे। जनता खुल्लम खुल्ला कहा करती थी कि यदि नर्क कहीं पृथ्वी पर है तो रोम उसके

* उच्चपदस्थ पादरी जो पोप के धर्म के प्रचारक और उसके प्रति निधि अथवा दूत होते थे। स०

ऊपर बसा है । दूसरे इसमें इतना और जोड देते थे कि बस अब शीघ्र ही इस नगर का नाश होगा । लूथर एक स्थान पर लिखता है कि रोम में पवित्र से पवित्र वस्तु की हसी उडाई जाती है और यदि किसी को ऐसी अश्लीलता से दुख होता है तो लोग उसको (Bron Christian) 'मूर्ख' की उपाधि देते हैं "मानो ईसाई होना ही मूर्खता है। यह सब देखने सुनने पर भी यह कहना अत्युक्त होगा कि लूथर रोम से कैथलिक धर्म द्रोही होकर लौटा क्योंकि जन्म जन्मांतर के सस्कार कही महीनों में नहीं पलटते ।

लूथर उसही वर्ष रोम से लौट आया और आकर विटेन्वर्ग के विश्वविद्यालय में धर्म शास्त्रों की शिक्षा देने लगा । सन् १५१२ से सन् १५१७ तक लूथर इस ही स्थान पर अपना कर्त्तव्य करता रहा । इन पाच वर्षों में उसे कठिन मानसिक परिश्रम करना पडा । कभी २ उसे एक ही दिन में ४ बार तक धार्म्मिक विषय पर उपदेश देना पडता था । इस ही समय में उसने बहुत कुछ यहूदी भाषा का भी अभ्यास कर लिया । उन दिनों लूथर को इतना कठिन परिश्रम करना पडता था कि उन्हें बहुत कम अवकाश अपने निज के कार्यों के लिये बचता था ।

धीरे २ करके लूथर की ख्याति इतनी बढी कि लूथर सेक्सनी के राजकुल के शिक्षक नियत होगये और यहीं उनको उन लोगों से मित्रता करने का अवकाश मिला जिनकी सहायता विना स्यात् लूथर पोपयुद्ध में सफल न होते ।

छठवाँ परिच्छेद

लूथर और पोप की प्रथम मुट भेड़

पोप जूलियस द्वितीय की मानवलीला समाप्त हो चुकी है। उसके स्थान पर अब पोपलियो दशम् पोप हुआ है। इस पोप का ईसाई धर्म पर कितना ओछा विश्वास था यह इसके इस ही कथन से स्पष्ट है कि "ईसाई धर्म तो वास्तव में एक धनोपार्जन की कहानी है"। यद्यपि उसको इसाई धर्म पर कुछ भी विश्वास न था तोभी वह सांसारिक सुखों का दृढ भक्त था। सांसारिक सुखों में यदि कोई ऐसा सुख है जो उच्च पद प्रतिष्ठित व्यक्तियों को भी भर पेट नहीं मिलता तो वह है नाम की इच्छा। आज कल के धनी लोग "राय बहादुरी" की बहादुरी के पीछे दुबले रहते हैं पुराने समय के धनी लोग मंदिर धर्मशाला आदि बनवा कर अपना नाम अमर करने का उद्योग करते थे। पोपलियो भी इसी विचार में था कि किस प्रकार उसका नाम अमर हो कि इतने में उसे सूझीकि लाखों में एक ऐसा गिरजा बनवाऊ जिसका प्रति द्वन्दी संसार में न निकले। सेंटपीटर का एक गिरजा बनना चाहिये। प्रश्न यह था कि इतना धन कहां से आवे परन्तु इसके लिये अधिक सोच विचार करने की आवश्यकता न थी। पोप ने इन्डलजेंसों की दुकानें अपने सारे साम्राज्य में खोल दी। इन्डलजेन्स कुम्भ मेले के टिकट की तरह बिकने लगे।

प्रश्न होता है कि इन्डलजेन्स थे क्या ? इन्डलजेन्सों का सिद्धान्त सच्चा था या झूठा इस विवाद में हमें न पड़ना चाहिये सिद्धान्तानुसार उन्हें बहुत से कैथलिक बिलकुल निरापद सिद्ध कर सक्ते हैं परन्तु पोप लोगों ने जिस प्रकार इन्डलजेन्सों को धन पैदा करने की कल बना रक्खा था इसे कोई पोप भक्त भी निरापद नहीं सिद्ध कर सकता। सारे ईसाई संसार में करोड़ों पोप भक्त नित्यप्रति पाप करते हैं। इन पापों के कारण इन सब पापियों को नरक में वास, करना पड़ेगा। परन्तु ये पापी यदि चाहें तो नर्क यातना से उसी प्रकार साफ बच सकते हैं जैसे एक हत्यारा दशहजार पेशी का एक बारिस्टर कर हाई कोर्ट अपील से साफ बच आता है। पापी का सीधे पोप के पास जाना होगा, पोप से पाप कहना होगा। पोप तब कहेंगे कि तुम्हें इतना रुपया देना होगा तब तुम्हें क्षमा प्रदान की जायगी। पापी रुपये की थोरी पोप के सामने धरता है, पोप उसे क्षमा प्रदान का पत्र देता है। पापी विश्वास कर लेता है कि बस, अब उसे नर्क का कष्ट न उठाना पड़ेगा। उदाहरण के लिये मानलो जान ने अपने भाई पीटर को मार कर उसकी एक लाख की सम्पत्ति हड़प करली। हर समय उसे भय रहता है कि यद्यपि हाई कोर्ट में तो बारिस्टर की बहस ने प्राण बचालिये परन्तु नर्क की आग में तो पड़ना ही होगा। जान ने बीस हजार पोप की नजर किये, पोप ने उसे क्षमा प्रदान करदी। इस ही का नाम है इन्डलजेन्स। अब जान सुख की नींद सोता है। न नर्क की यातना का भय है न राजा की मार का। यद्यपि उसको रुपये बहुत खर्चने पड़े तब भी पोप की जय बनी रही रोजगार

बुरा नहीं है। अब भी पीटर के साठ हजार जान की टेंट में है। जान को कभी सदेह भी नहीं होता कि पोप की क्षमा प्रार्थना खरीदने के बाद भी उसे नर्क की आग में पड़ना पड़ेगा। और संदेह करने का कोई कारण भी नहीं दिखाई पड़ता। ईसाई धर्म ही ने सिखाया है कि मृत्योपरान्त पापी को नर्क मिलता है उस ही धर्म के सचालक प्रभु ईशुमसीह का सर्वोपरि प्रतिनिध पोप कहता है कि पापी इन्डलजेन्स खरीदने के उपरान्त नर्क नही जाता। बस इसमें सदेह करने की कौन बात है। ईसाई धर्म ही ने नर्क का भय पैदा किया था ईसाई धर्म ही उस भय को रुपया ले निवारण करता है। जान सत्यता में सदह नहीं करता।

यह तो सदा की प्रथा थी। अब पोपलियो ने पापियो की सुगमता के लिये एक नया उपाय निकाल दिया है। पापियो को अब रोमे जाने की आवश्यकता नहीं है। पोपलियो ने शहर शहर ग्राम ग्राम इन्डलजेन्स बेचने की दुकाने खोल दी हैं मानो महात्मा लियो ने एक दम ही सारे ससार को निष्पाप करने की कल आविष्कृत करली है। कहीं ऐसा नहो कि निर्धन पापी पोप की इस क्षमा प्रदान का लाभ न उठा सकें इस कारण पोप ने दया वश अपनी क्षमाप्रदान का मूल्य सब से एकसा न लेकर सबसे उसकी धन सामर्थ्य के अनुसार (मूल्य) लेना निश्चय किया है। राजा महाराजा तथा राजकुमार इत्यादि को इन्डलजेन्स क्रय करने के लिये २५ सुवर्ण मुद्रायें देनी होती थी। बेवट बेरन इत्यादि बड़े जमीन्दारों को दस, जिनकी वार्षिक आय-५०० सुवर्णमुद्रायें हो उन्हे छ, सामान्य दूकानदारों तथा उन व्यक्तियों को- जिनकी

वार्षिक आय दो सौ सुवर्ण मुद्रा हो उन्हे तीन सुवर्ण मुद्रायें देनी पड़ती थी। यद्यपि बिलकुल निर्धन मनुष्य को कवल पश्चात्ताप और व्रत करने के उपरान्त इन्डलजेन्स प्रदान करने का नियम था परन्तु ऐसा वास्तव मे कभी होता नहीं था। माइकानियम्न कहता है कि अनावर्ग मे एक नव युवक ने बिना धन दिये इन्डलजेन्स प्राप्त करने की प्रार्थना की परन्तु उसकी प्रार्थना किसी ने न सुनी।

ये इन्डलजेन्स सारे योरप मे बेचे जाते थे। इन्डलजेन्स बेचने के लिये सारा जर्मनी तीन भागों मे विभक्त किया गया था। उन तीन भागों में से वह भाग जिसमे लूथर रहते थे मेंचस के बड़े महन्त (archbishop) अलबर्ट को सौंपा गया है। यह केवल बड़ा महन्त ही न था वरन् जर्मनी के दो और उच्च पदों का भी अधिकारी था। इसकी आयु अभी केवल सत्ताइस वर्ष की थी। कहने को तो यह धर्म पिता था परन्तु वास्तव में इससे बढकर पाप पिता स्यात् ही दूसरा महन्त होगा। यह महा स्त्रीलंपट और व्यभिचारी था। यदि कुछ गुण था तो यही कि विद्वानों तथा कलाकुशलों का अच्छा मान करता था। इसने बड़े महन्त का पद प्राप्त करने के लिये पोप को बड़ी भारी रकम उत्कोचरूप में दी थी। और ये सब रकम उस समय के प्रसिद्ध महाजन फगर्स से उधार ली गई थी। फगर्स आग्सवर्ग में रहता था। कासलिन नामक एक विद्वान ने जर्मन भाषा में लूथर की एक जीवनी बड़ी खोज परताल से लिखी है। (उसका अंगरेजी मे भी उल्था हो चुका है) कासलिन अपनी पुस्तक मे अलबर्ट का चित्र यों खींचता है (अलबर्ट का चित्र भी उसकी पुस्तक में दिया गया है।

"उसके ओंठ मोटे मोटे, चेहरा भारी, आंखें निष्प्रभ, नाक लंबी और झुकी हुई थी"

- उधार ली हुई रकम के लिये तकाजे पर तकाजे आने लगे। अलबर्ट के पास द्रव्य कहाँ जो फगर्स का कर्जा पाटे। ठीक इसही समय पोप लियो को इन्डलजेन्सों की बिक्री के लिये एक सुयोग्य व्यक्ति की आवश्यकता हुई। अलबर्ट से बढ़कर अच्छी तरह इस काम को स्यात् ही अन्य कोई कर सकता। पोप और अलबर्ट में तुरन्त समझौता होगया। जर्मनी के एक भाग में जितने इन्डलजेन्स बिकें उन सब का ठेका अलबर्ट को मिल गया। ठेके की शर्त यह थी कि उस भाग में इन्डलजन्स बेचने से जितना वसूल हो उसका आधा पोप को भेजा जाय और आधा अलबर्ट स्वयम् लेले।

फगर्स भी चुप बैठने वाला महाजन न था। फगर्स को ज्योंही पता लगा कि अलबर्ट को एक आय का मार्ग मिल गया त्योंही उसने अपने सिपाही अलबर्ट के पास भेजे। तब यह हुआ कि फगर्स के इन दूतों के पास सदूक की दूसरी ताली रहे और प्रत्येक दिन की आमदनी का आधा ये लोग तुरन्त अपने अधिकार में कर लिया करें। इस तरह इन्डलजेन्स प्रचारकों के पीछे पीछे फगर्स के दूत भी लगे रहते थे। अलबर्ट ने टटजेल नामक एक महन्त को सैक्सनी में इन्डलजेन्स बेचने को भेजा था। यह निर्विवाद प्रमाण से सिद्ध होचुका है कि टटजेल ने स्वयम् इतना द्रव्य हड़प किया कि वह धनी होगया।

जिस नगर में इन्डलजेन्स बेचना होता था उस नगर में पहिले से बड़ी धूम धाम की जाती थी। झुंड के झुंड पादड़ी

पुरोहित और महन्त नियमानुसार एक पंक्ति में होकर उस नगर में निकलते थे। ये सब हाथों में मोमबत्ती और बड़े बड़े झंडे लिये रहते थे। धर्मगान और भजनों के साथ साथ घंटे बजते जाते थे। ये सब झुंड बड़े गिरजे के निकट ठहर जाता था। गिरजे में वेदी के ऊपर एक रक्त वर्ण * क्रूस रक्खा जाता था। गिरजे के ऊपर बड़े भारी भारी रेशमी झंडे जिनमें पोप के अस्त्र का चिन्ह बना होता था फहरात थे। सब के नीचे एक बड़ा भारी लोहे का तसला रक्खा जाता था। इसही तसले में करोड़ों वर्षों की नरकाग्नि से बचाने वाली औषध का मूल्य रक्खा जाता था। बड़े बड़े सुमुख वक्ता उपमा अलंकार पूर्ण बड़े बड़े धर्मव्याख्यान देते थे। उन व्याख्यानों द्वारा लोगों को यह बताया जाता था कि किस प्रकार अल्पमूल्य में वे अपने को घोर नरकाग्नि से बचा सकते हैं। व्याख्यान के अन्त होने पर वे सब हत्यारे लुटेरे डाकू जो पूर्व ही से इस कार्य के लिये एकत्रित किये गये थे आगे बढ़ बढ़ कर इन्डलजेन्स क्रय करते थे। बीच बीच में वक्ता महाशय यह भी कहे जाते थे कि यह कुछ अत्यावश्यक नहीं है कि पापी ही मनुष्य इसे मोललें। यदि किसी व्यक्ति को सदेह है कि उसके पूर्वजों में किसी ने कुछ पाप किया है और वह नरक में है तो उस व्यक्ति का यह धर्म है कि वह एक इन्डलजेन्स मोल लेकर अपने पूर्वजों का नरक से उद्धार करे और उसे स्वर्ग भेजे।

*क्रूस पुराने समय की एक प्रकार की सूली का, नाम है। इस ही पर ईसा को फांसी दीगई थी। तब से ईसाई लोग इस चिन्ह को पवित्र मानने लगे हैं।

न्डलजेन्स रूपी औषध की अमोघता*पर हजारों शपथ खायी जाती थीं। और इस पर भी यदि कोई संदेह प्रकट करता था तो तुरत उसे नास्तिक की उपाधि देदी जाती थी और कहा जाता था कि यदि वह इन्डलजेन्स पर अपना विश्वास न लायेगा तो धर्म से वहिष्कृत कर दिया जायगा।

बहुधा यह काम मेले तमाशों में भी किया जाता था जहाँ लोग आपही मेले तमाशे के लिये जमा होते थे। यही नहीं था कि इन्डलन्जेस केवल नरकाग्नि बचाने ही के लिये बेचे जाते हों। कैथालिक मतानुसार मनुष्य दिन भर में सैकड़ों पाप करता है। प्रत्येक पूजा का, प्रत्येक दैनिक कर्म का सूक्ष्म से सूक्ष्म भी विस्तार निश्चित है। यदि एक शब्द जिस प्रकार से कहना चाहिये उस प्रकार से नहीं कहा गया, यदि मंत्र पाठ करते समय जिस तरह आंख मूंदना चाहिये उस प्रकार आंख नहीं मुंदी, यदि हाथ हृदय तक न उठ कर कमर ही तक उठे, बस पाप लग गया। लूथर कहता है "जिस पात्र से पहिले ईश्वर का प्रसाद नहीं लगाया गया है उस पात्र से यज्ञ करना पाप है, अपवित्र

---

* माईकोनियस जो उस समय धनावर्ग के फ्रासिस्कन मठ मे रहता था इस प्रकार लिखता है।

"So highly honoured was the indulgence that when the commissary was brought in the town the Bull was borne aloft on a velvet or golden cushion and all priests monks Councillors, School Masters scholars then women virgins and children marched in procession with banners and tapers and singing, then all bells were rung, all organs played

वस्त्रों को पहिन कर पूजा करना पाप है, मन्त्र पढते समय दूसरी बात बोल उठना पाप है, यदि मन्त्र का उच्चारण करते समय जिह्वा तुतला उठे तो पाप है" परंतु इन सब भिन्न २ पापों से रुपया देकर छुटकारा मिल सकता था। पोप को एक पुल बनाने को रुपया चाहिये। पोप ने बटर-ब्रीफ (butter (brief) नामक इन्डलजेन्स बेचना प्रारभ किया। इस इन्डलजेन्स को मोल ले लेने के उपरान्त यदि व्रत के दिन मनुष्य मक्खन खाय तो उसे पाप नहीं लगेगा। यदि एक पोप भक्त से सारे दिन विभुक्षित रह कर व्रत नहीं किया गया और सध्या के निकट आने पर भूख से व्याकुल हो उसने थोडासा मक्खन खा लिया—उसने पाप किया। बस उद्धार तब ही होगा जब वह उपरोक्त नामक इन्डलजेन्स मोल ले।

धीरे २ जान टटजेल महाशय विटेन्वर्ग के निकट पहुचने लगे। जैसे २ टटजेल महाशय निकट आते गये वैसे ही वैसे टटजेल के विषय में अनेक किम्वदन्तिया लूथर के कान तक पहुँचती गई। लोग आ आ कर लूथर से कहने लगे कि टटजेल तो अपने उपदेशों में कहता है कि "यदि किसी मनुष्य ने ईशू की मा मरियम् के साथ भी घोरतर व्यभिचार किया हो तो उसका भी उद्धार इन्डलजेंसों द्वारा हो सकता है, मैंने इन इन्डलजेसों द्वारा जितने पापियों को तार दिया है उतने पापी तो कभी पीटर स्वयम् अपने उपदेशों द्वारा न तार सका होगा।" इन्डलजेन्स क्रय करने वाले एक ओर तो किये हुए पापों से मुक्त हो जाते हैं दूसरी ओर यदि भविष्य में पाप बन पडे तो उसका भी दंड उन्हें नहीं मिल सकता टटजेल कहा करता था कि ज्योंही मुद्रा गिरने से तसला बजा कि बस उसी

क्षण पापी की आत्मा नरक को त्याग तुरत स्वर्गधाम को चली जाती है"।

इसमें सन्देह नहीं कि इन उपरोक्त कथनों में बहुत कुछ अतिशयोक्ति मिली हुई हो सकती है परन्तु तब भी जब ये ध्यान में आता है कि किस तरह के धनलोलुप इस कार्य को कर रहे थे तब सभी को विश्वास करना पड़ता है। महाराज के दूत जिसके पीछे २ डंडा लिये फिरते थे ऐसे प्रलपट से क्या उचित अनुचित कारवाइयाँ,इन्डलजेन्स,बेचने के लिये न की गई होंगी यह एक सोचने की बात है। टट्जेल ने तो मानों इन्डलजेन्स बचने के लिये अवतार ही लिया था। इन्डलजेन्स बेचते २ टट्जेल के १७ वर्ष बीत चुके थे जब उसने प्रलपट की नौकरी स्वीकार की। टट्जेल का निज का चरित्र भी वैसा ही था जैसा कि ऐसे ढंग से आशा की जानी चाहिये। व्यभिचार में पकड़े जाने पर उसे डुबाये जाने का दण्ड मिला परन्तु फिर यह दण्ड बदल कर उसे आजन्म कारागार का दंड दिया गया। वह लीपजिग के कारागार से भाग निकला और इन्डलजेंस बेचने का काम करने लगा।

लूथर के मित्र आ आ कर उससे यह सब कहते थे और पूछते थे कि आपके विचार में यह न्याय है या अन्याय। इन अनेक अन्याय पूर्ण बातों को सुनते २ लूथर की अन्तरात्मा दुःखी हो उठी। उससे न रहा गया। १५१७ इसवीं की ३१ वीं अक्टूबर का दिन योरप के इतिहास में बड़े महत्व का है। इस ही दिन विटेनबर्ग के गिरजे के दरवाजेपर लूथर द्वारा लिखित एक चिट्ठा दिखाई पड़ा। इस चिट्ठे में लूथर ने इन्डलजेंसों के विरुद्ध ९५ आक्षेप किये थे और

आह्वान किया था कि जिसका जी चाहे वह आकर लूथर से उन विषयों पर शास्त्रार्थ कर ले। लूथर इस समय चौंतीस वर्ष के थे।

एक तरह से विचार करने पर लूथर के इस कार्य में कोई विशेषता नहीं दिखाई पड़ती क्योंकि उन दिनों यह एक सामान्य प्रथा थी कि विद्वान लोग परस्पर शास्त्रार्थ करने के लिये एक दूसरे का आह्वान करें। यदि अमुक मनुष्य ने अमुक पक्ष लिया तो इससे यह कभी नहीं समझा जाता था कि वास्तव में वह उस पक्ष पर विश्वास करता है। बहुधा ही विद्वान अपने निश्चित विश्वास के प्रतिकूल पक्ष का समर्थन करते थे और इस तरह ख्याति कमाते थे। जब ईसाई धर्म के निश्चित् सिद्धान्तों के ऊपर भी शास्त्रार्थ हुआ करते थे और लोग उनके विरुद्ध पक्ष को ग्रहण कर सत्यासत्य का निर्णय किया करते थे तब फिर इन्डलजेन्सों पर आक्षेप करना कौन बड़ी कठिन बात थी, क्योंकि इन्डलजेन्सों का विषय तो उस समय तक निर्विवाद सिद्ध भी नहीं हो चुका था और ईसाई विद्वानों का उस विषय पर बहुत *मतभेद था।

लूथर ने ९५ आक्षेपों को बहुत शीघ्रता में लिखा था और उसने कभी स्वप्न में भी न सोचा कि यही "आघातात्र" कागज, सारे यौरप में आग लगा देगा। वो चिट्ठा यों प्रारम्भ होता है

* ईसाई धर्म के विद्वानों का इन्डलजेन्स पोप के इन्डलजेन्स से बिलकुल विपरीत था। इन लोगों ने तो तत्वज्ञान दृष्टि से यह बताने का उद्योग किया था कि मनुष्य किन २ उपचारों द्वारा पाप निर्मुक्त हो ईश्वर के सम्मुख जा सकता है। हमने उनके मत को इस पुस्तक में सविस्तर वर्णन करने की आवश्यकता न समझा क्योंकि वह बहुत रुचि कर न होता।

"सत्य को स्पष्ट करने की इच्छा और प्रेम के कारण माननीय धर्म पिता मार्टिन लूथर की अध्यक्षता में निम्न लिखित विषयों पर विटेनबर्ग में शास्त्रार्थ होगा "। पोप लियो को जो पत्र लूथर ने लिखा उसमें वो कहता है "ये विवाद विषय हैं, न सिद्धान्त है न आदेश"। लूथर को पूरा विश्वास था कि यदि यह इन्डलजन्स की बुराइयों को बड़े पद के पादड़ियों को समझावेगा तो निश्चय है कि वे इसका सुधार करेंगे। और इसी विचारानुसार उसने एक पत्र अलबर्ट को भी लिखा जिसके उत्तर में अलबर्ट ने केवल इतना लिख भेजा कि तुम्हारी रिपोर्ट पाप के पास भेज दी गई है और तुम्हें राम से आने वाली आज्ञा की प्रतीक्षा करनी चाहिये। चाहे लूथर का विचार कुछ भी क्यों न रहा हो ईश्वर की यही इच्छा थी कि यही "आधा ताव" कागज योरप को पोप पाप से निर्मुक्त करे। दोही सप्ताह के भीतर उस "आधेताव" कागज की सहस्रों प्रतियाँ छपकर बँटन लगीं। उसका जर्मन भाषा में उल्था हुआ। देखतेही देखते उनका इतना प्रचार होगया कि घर २ उन विषयोंपर चर्चा होने लगी। पोपों का प्रताप इस समय सूखे घास का ढेर मात्र था उसमें दिया सलाई लगा दी गई अब उसे स्वाहा होने से कौन रोक सकता था। माइकोनियस कहता है कि वे विवाद विषय घर २ इतनी शीघ्रता से फैल गये "मानो स्वर्गदूतों ने उनके प्रचार करने का भार अपने ऊपर स्वयम् लिया था"।

उस चिट्ठे का मूल्य समझाने के लिये उसमें से कुछ महत्व शील विवाद विषय नीचे दिये जाते हैं। (५) *पोप केवल उन्हीं

* विषयों के नम्बर हैं।

दण्डों की क्षमा दे सकता है जो उसने स्वयम् अपनी इच्छा से दिये हों या जिनकी क्षमा का विधान धर्मशास्त्रों में हो और अन्य किसी प्रकार के पाप की क्षमा न तो पोप दे सकता है न उसे देना चाहिये। (४२) ईसाइयों को यह सिखाना चाहिये कि यह पोप की कभी इच्छा नहीं है कि इन्डलजेन्स क्रय करना दया धर्म से भी बढ़कर माना जावे। (४३) ईसाइयों को सिखाना चाहिये कि दरिद्रों और दुःखियों की सहायता करना 'क्षमा क्रय' से कहीं अधिक श्रेयस्कर है। (५०) ईसाइयों को सिखाना चाहिये कि यदि पोप को इस बात का ज्ञान हो कि उसकी भेड़ों* का रुधिर मांस अस्थि किस प्रकार उपदेशकों द्वारा इन्डलजेन्स रूपमें चूसा जा रहा है तो वो अपना गिरजा कदापि न बनवायेगा। (८२) यदि पोप दयावश धन ले पापियों को नरक से मुक्त कर सकता है तो वह उसी दयावश नरक ही का नाश कर सब को नरक यातना से मुक्त क्यों नहीं कर देता। (८६) पोप स्वयम् कारू† की तरह धनवान् है अतः उसे चाहिये कि पीटर का गिरजा स्वयम् अपने निज के द्रव्य से बनवाये और अपने दरिद्र भेड़ों को न चूसे।

इन उपरोक्त उदाहरणों से यह स्पष्ट है कि लूथर ने उस चिट्ठे में कहीं यह नहीं लिखा था कि पोप की कोई आज्ञा न माने या पोप धर्म के विरुद्ध एक नया धर्म चलाया जावे। लूथर ने उस चिट्ठे द्वारा केवल इन्डलजेन्स क्रय का अनौचित्य मात्र दिखाया था। पोप पद पर किसी प्रकार का आक्षेप नहीं

*पोप के भक्तों की उपमा बहुधा भेड़ों से दी जाती है और पोप स्वयम् मेषपाल समझा जाता है।

† पशिया माइनर के एक बहुत पुरातन राजा का नाम है जो अत्यन्त धनी माना जाता था।

किया था। यदि लूथर ने टट्जेल द्वारा वेचे जाने वाले इन्ड-लजेन्सों का विरोध किया था तो वह विरोध केवल एक कर्मचारी द्वारा किये हुए एक कार्य विशेष के प्रति था। पोप* पद के विरुद्ध यह विरोध कदापि न था। परन्तु उसके अर्थ यही किये गये कि लूथर पोप का विरोधी है। इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है। यह भेद इतना सूक्ष्म है कि इसकी सीमा का ज्ञान बीसवीं शताब्दी में भी बहुत कम लोगों को है। अनेकों घटनाओं में समालोचना मात्र ही अराजकता का पूरा प्रमाण मान ली जाती हैं।

लूथर ने कभी स्वप्न में भी यह न सोचा था कि इसही 'आधे ताव' कागज के लिखने के कारण उसे पोप ऐसे महाबलशाली व्यक्ति का सामना करना पड़ेगा। जब उसे यह स्पष्ट होगया कि यह आधाताव कागज घोर आन्दोलन का कारण बन चुका है तब भी उसकी इच्छा उस आन्दोलन में भाग लेने की न थी। लूथर ने इस घटना के कई वर्षोपरान्त कहा कि "भला मुझ ऐसे तुच्छ और नीच महन्त में यह साहस कहा कि मैं पोप ऐसे महा प्रतापी पुरुष के विरुद्ध खड़ा होऊं"। पोप लियो जिसके पास लूथर की रिपोर्ट गई थी उन व्यक्तियों में से था जो ससार को अपने आनंद का उपवन समझते

* लूथर पोपलियो के प्रति अपनी नम्रता इस प्रकार दर्शाता है—हे परम पवित्र पिता मैं आपके चरण कमलों में साष्टांग प्रणाम करता हूं। आप मेरे तन मन धन सब के प्रभु हैं। आप (चाहे) घटायें बढ़ायें, बुलायें, पुचकारें दुत्कारें, मानें, न मानें, जो आपकी इच्छा हो कर। मैं आपकी आज्ञा प्रभु इशु की आज्ञावत मानूंगा। यदि मैंने मृत्युके योग्य कार्य किया है तो मैं मरने से मुख न मोडूगा।

कष्ट नहीं उठाना पड़ा। 'अभय पत्र' मिलने के उपरान्त लूथर पोप के कार्डिनल से मिला। लूथर के मित्रों ने समझा दिया था कि कार्डिनल के साथ बड़े आदर सम्मान से मिलना। लूथर अकेला मिलने नहीं गया था वरन् दो या तीन मित्र उसके साथ थे।

लूथर कार्डिनल के निवास स्थान पर पहुंचा। साक्षात् होते ही लूथर ने कार्डिनल को साष्टांग प्रणाम किया। कार्डिनल ने भी बहुत शिष्टता से लूथर को उठने की आज्ञा दी। इसके उपरान्त क्षेम कुशल पूछी गई। जब यह सब हो चुका तो वास्तविक विषय सामने आया। कार्डिनल निश्चय लूथर के साथ बड़ों का सा बर्ताव करना चाहता था और लूथर को छोड़ना भी स्वीकार करता था परन्तु प्रतिज्ञा यह कराना चाहता था कि लूथर उसी समय उसकी उपस्थिति में अपनी पूर्व की सब समालोचनायें लौटाल ले और अपनी मूर्खता स्वीकार करे। कार्डिनल की तीन आज्ञायें थीं —(१) लूथर अपना नास्तिकता को लौटाल ले और पश्चात्ताप करे (२) लूथर प्रतिज्ञा करे कि भविष्य में वह ऐसी समालोचनायें कभी न करेगा (३) लूथर कोई ऐसा अन्य कार्य न करेगा जिससे रोमन कैथालिक धर्म में अशांति फैले। लूथर ने इन सब का उत्तर यही दिया कि यदि हमारी समालोचनाओं में कोई प्रमाद दिखा दिया जाय तो हम उसे तुरंत स्वीकार कर लेंगे। इस पर दोनों में थोड़ी देर तक अच्छा शास्त्रार्थ हुआ परन्तु लूथर को विदित हुआ कि ऐसे शास्त्रार्थ से उसका कोई भला न होगा यदि कुछ फल होगा तो यही कि कार्डिनल और चिढ़ जायगा। अतः लूथर ने उस दिन

घर जाने की प्रार्थना किया और कहा कि कल हम अपनी स्थिति को लिख लावेंगे और तब परस्पर समझौता शीघ्र हो जायगा।

दूसरे दिन लूथर तीन राज सचिवों को भी साथ लेता आया। आज डाक्टर स्टापिज भी साथ थे। लूथर का चिट्ठा जिस पर वह अपनी स्थिति लिख लाया था कुछ लम्बा था परन्तु सक्षेपत उसका तात्पर्य यह था कि "मैं तन मन धन से पोप का सेवक हूं परन्तु सत्यान्वेषण करना कोई ऐसा पाप नहीं है कि मुझे बिना बिचार का समय दिये दण्ड दे दिया जाय। मुझे पूरा विश्वास है कि मैंने कोई ऐसा कार्य नहीं किया है जो शास्त्रविगर्हित हो। यद्यपि मैं स्वीकार करता हूं कि मुझसे प्रमाद हो सकते हैं परन्तु बिना प्रमाण मैं कोई दोष स्वीकार नहीं कर सकता। इस पर कार्डिनल ने कहा "पुत्र! मैं तुमसे शास्त्रार्थ करने नहीं आया हूं और न ऐसा करने की मेरी इच्छा है। मैं तो इसलिये आया हूं कि सहानुभूति तथा सहिष्णुता सहित तुम्हारी बातें सुनूं और तुम्हें कुछ उपदेश दूं"।

तीसरे दिन लूथर उससे भी बड़ा चिट्ठा लेकर उपस्थित हुआ और उस चिट्ठे में उसने स्पष्ट कह दिया कि बाइबिल का प्रमाण ही उसके लिये मान्य है। पोप की आज्ञाओं को वह बाइबिल की आज्ञाओं के अन्तर्गत समझता है। पोप की आज्ञायें बाइबिल की आज्ञाओं के अनुसार होने पर माननीय हैं विरुद्ध होने पर त्याज्य है। लूथर बाइबिल के अर्थ जैसे वास्तव में हैं वैसे किया चाहता था। कार्डिनल कहता था कि बाइबिल के अर्थ जैसे पोपों को सम्मत होते आये हैं, और सम्मत हों

तक लूथर नास्तिक सिद्ध नहीं किया गया है अत उसे अभी अपनी शरण से नहीं हटाया जा सकता। यदि लूथर नास्तिक प्रमाणित हो चुका होता तो वह विना किसी सकोच तथा बहिर्प्रेरणा के ही उसे निवार्सित करना अपना परम धर्म समझता।

सप्तम परिच्छेद

पोप की चालें

यह तो निश्चित था कि पोप फ्रेडरिक और लूथर की परस्पर जो स्थिति थी उसमें कुछ परिवर्तन होगा परंतु प्रश्न यह था कि यह स्थिति परिवर्तन किस नीति द्वारा होगा—दंड या साम। पोप को अभी साम नीति की सफलता में बहुत कुछ आशा थी और उसने उस ही नीति का अवलंब लिया। पोप ने अपना एक मिलटिज नामक दूत फ्रेडरिक के पास एक पत्र सहित भेजा। उस ही पत्र के साथ २ पोप ने 'सुवर्ण गुलाब' (Gold Rose) भी फ्रेडरिक को भेजा। सुवर्ण गुलाब' उसे दिया जाता था जिसका पोप सर्वोपरि मान करता था और फ्रेडरिक को इसे पाने की बहुत दिनों से बडी उत्कट इच्छा थी। यही नहीं कि केवल सुवर्ण गुलाब ही भेजा गया था वरन् पत्र भी बडी नम्रता से लिखा गया था। इस पत्र द्वारा पोप ने बडा आश्चर्य प्रगट किया था कि उसके धर्म साम्राज्य में एक मृत्युनदन नास्तिकता का प्रचार कर रहा है। उसने लिखा कि ",मुझे पूर्ण आशा और विश्वास है कि मेरा प्यारा पुत्र तथा न्यायाधीश सेक्सनी का राजा फ्रेडरिक इस शैतानी स्मज (लूथर) का मुख बंद कर देगा"।

१५१८ के नवम्बर मासमें चार्ल्स'हान मिलटिज इटली से जरमनी के लिये चल पडा। दिसम्बर मास तक उसके प्रस्थान का समाचार उन सब लोगों को विदित होगया जिनसे उसका

कुछ सम्बन्ध था। नूरेन्वर्ग तक पहुंचते २ जो उसने देखासुना उससे उसे विदित होगया कि जर्मनी में यदि तीन मित्र लूथर के हैं तो एक पोप का। इन सब बातों को देख सुन उसने भी अपना भाव बदल दिया और सरल उपायों द्वारा काम निकालना निश्चित किया। मिलटिज को विदित हुआ कि सब से पहिले यह आवश्यक है कि वह टटज़ेल की धूर्तता के दोष से पोप को बचावे। उसने टटजेल को लीपजिग़से अलटेन बर्ग आने की आज्ञा दी। परन्तु टटजेल ने एक बडे और नम्र पत्र द्वारा वहा न आने के लिये क्षमा मांग भेजी। उसने लिखा कि "लीपज़िग छोडने से हमारे प्राणों पर आ बनेगी क्योंकि उस आगस्टियन महन्त लूथर ने ऐसी आग लगाई है कि सारा जर्मनी हमारे रुधिर का प्यासा हो रहा है"। अत में मिलटिज स्वय लीपजिग गया और वहाँ पहुचकर उसने टटजेल को अपने सामने बुलाया। मिलटिज को टटजेल की परीक्षा के उपरान्त विश्वास होगया कि टटजेल ने बडी २ धूर्तता और दुष्टतायें की हैं। उसे यह भी विदित हुआ कि टटजेल बहुत सा रुपया स्वय हडप गया है। इसके छ: महीने के उपरान्त टटजेल बडी दुर्दशा के साथ मर गया।

६ जनवरी को मिलटिज लूथर से मिला। उस अवसर पर फ्रेडरिक का एक सचिव भी साथ था। दोनों ने बडी आव भगत और मित्रता दिखाई। कुछ मिलटिज ढीला पडा कुछ लूथर और निश्चित हुआ कि लूथर भविष्य में इन्डल्जेन्सों के विषय में कुछ न लिखेगा और पोप लूथर को किसी विद्वान् पादडी के पास भेजकर उसको उसके दोष स्पष्ट करा देगा। इस प्रकार दोनों व्यक्ति परस्पर आलिङ्गन कर

दूसरे से विदा हुये।

लूथर की इच्छा न थी कि वह पोप के विरुद्ध कुछ और अधिक आन्दोलन करे परन्तु कुछ घटनायें ऐसी हुई कि लूथर को विवश हो मिलटिज़ द्वारा सम्पादित शान्ति तोडनी पड़ी। जानईक नामक विद्वान् से लूथर को एक घोर शास्त्रार्थ लीपजिग नामक नगर में करना पड़ा। लीपजिग में भी एक विश्वविद्यालय था जो कट्टर कथालिक पोप भक्तों का दुर्ग था। इस शास्त्रार्थ का अध्यक्ष जार्ज ड्यूक भी कट्टर कथालिक था। इस ही ड्यूक के दुर्ग में यह शास्त्रार्थ हुआ। जैसा बहुधा होता है इस शास्त्रार्थ में भी असबद्ध प्रलाप दोष बहुत किये गये। ईक ने लूथर को हस का अनुगामी बनाया। लूथर ने हसको सच्चा ईसाई सिद्ध करते हुये अपने को बचाने का उद्योग किया। इस पर ईक ने उसे यह स्वीकार करने पर विवश किया कि सभायें भी भ्रम में पड प्रमाद कर सकती हैं। इतना मुह से निकलना था कि ईक ने अपने को विजयी मान लिया। लूथर १५२० ईस्वी की फरवरी को यों लिखता है 'आज तक मैं बिना जाने बूझे हस ही के सिद्धान्त सिखाता रहा, उसही तरह अज्ञानवश डाक्टर स्टापिज भी हस ही की शिक्षा देते रहे, संक्षेप, मैं यह कि हम सब हस के शिष्य हैं यद्यपि अभी तक इसे जानते नहीं थे "। उस विवाद के उपरान्त लूथर ने हस की पुस्तकें पढीं तो उसे विदित हुआ कि इसक और इसके विचारों में बड़ा ऐक्य है।

यह शास्त्रार्थ कई दिन तक होता रहा और इसका कुछ निर्णय नहीं हुआ कि कौन विजयी है। लीपज़िग वाले सब एक स्वर से ईक को विजयी स्वीकार करते थे। अध्यक्ष ड्यूक का भी यही निर्णय था। लीपजिग में ईक की बड़ी ख्याति

फैली। घर २ में उसका सम्मान होने लगा। दिन प्रतिदिन उसे बड़े २ कुलों से भोज के लिये निमन्त्रण मिलने लगे। लूथर ने भी ऐसे शत्रु नगर से बहुत शीघ्र अपना प्रस्थान किया। इस शास्त्रार्थ के विषय में ईक ने मन मानी बातें फैलाना प्रारंभ किया जिसका प्रतिवाद करने में लूथर को बहुत कुछ परिश्रम करना पड़ा, और कई लघु पुस्तकें प्रकाशित करनी पड़ीं। लूथर को ईक ही से अकेले युद्ध न करना पड़ा नित्य ही कोई न कोई विद्वान् लूथर पर आक्षेप करता था और अकेला लूथर उन सबकी पुस्तकों का उत्तर पुस्तक तथा पत्रिकाओं के रूप में देता था। इस तरह उसे एक प्रकार से अकेले ही चतुर्दश सहस्र राक्षसों से युद्ध करना पड रहा था पर धन्य है उसका साहस कि वह सब ही को चाहे खर हो त्रिशरा, चाहे दूषण, पुस्तकाकार बाणों से छिद्रही कर छोड़ता था।

इधर महात्मा ईक रोम पहुचे। रोम क्यों गये इसके विषय में मत भेद है। ईक स्वयं तो यही कहता है कि हमें रोम से निमन्त्रण आया था परंतु उसके शत्रुओं का कथन है कि निमन्त्रण आदि की बात सब बहाना है। लीपजग का विजेता ईक पोप से अपनी विजय के प्रतिफल में कोई उपयुक्त उपहार प्राप्त करने स्वयं ही गया था। रोम में ईक का बड़ा सम्मान किया गया। पोप और उसके कार्डिनलों ने उसकी बड़ी आव भगत की यहाँ तक कि पोप ने उसका सर्व साधारण

रहा था कि इतने में ईक महाशय वहाँ पहुच गये । ईक भी उस अंतरंग सभा के सदस्य बना लिये गये जो लूथर का बहिष्कार पत्र तय्यार करने में लगे थे। ईक एक स्थान पर बड़े गर्व के साथ लिखता है कि "परम पवित्र पोप, दो कार्डिनल, एक स्पेन का विद्वान और मैं" एक-बार बराबर पांच घंटे तक इस ही विषय पर विचार करते रहे" । इससे यह स्पष्ट विदित होता है कि पोप लूथर का विषय कैसे महत्व का समझता था और उसके ऊपर हाथ उठाने से उसे कितना भय लग रहा था । स्यात् ही ग्रेगरी सप्तम ने हेनरी चतुर्थ का बहिष्कार करते समय इतनी माथापच्ची की हो। अंतरंग सभा में एक बड़ा मतभेद था । कुछ लोग चाहते थे कि लूथर रोम बुलाया जाय और रोम में बुलाकर उस पर नियम पूर्वक नास्तिकता का अभियोग लगाया जाय और उसे अपनी रक्षा का समय दिया जाय । दूसरे कहते थे यह सब व्यर्थ होगा क्योंकि लूथर यहां आवेगा ही नहीं अतः यही उचित है कि उसका यों ही बहिष्कार कर दिया जाय ।

बहुत वाद विवाद के उपरान्त यही निश्चित हुआ कि लूथर का बहिष्कार बिना न्याय किये ही किया जाय और इस ही सिद्धान्तानुसार १५ जून सन् १५२० को लूथर के बहिष्कार का आज्ञा पत्र प्रकाशित हुआ । इस आज्ञा पत्र को, पोप कहता है, प्रकाशित करते उसके वत्सल हृदय में घोर कष्ट हो रहा है परन्तु क्या किया जाय "वन्य शूकर प्रभु ईशु के द्राक्षाक्षेत्र में घुस पड़ा है" ।, पोप जो अभी तक लूथर की नास्तिकता को क्षमाशील पिता की भांति सहन करता चला आया है, जर्मन देशवासी अपने अन्य पुत्रों के नास्तिक हो जाने के भय से,

उस धर्मकर्ता हुई चिता में, पोप का आज्ञापत्र तथा पोप की प्रभुता का समर्थन करने वाले अन्य बहुत से ग्रंथ भोंक दिये गये। अग्नि में स्वाहा करते समय लूथर ने मंत्रवत् लैटिन भाषा में यह पढ़ा "तूने ईश्वर के पवित्र भक्त को दुःखाया है अतः तुझे अनंत अग्नि चट कर जाय"। यह करने के उपरान्त लूथर तो तुरत अपने स्थान को लौट गया परंतु विद्यार्थीगण जिनके लिये यह एक आनंदमय उत्सव था वहाँ डटे रहे। उन्होंने उस चिता के चारों ओर प्रदक्षिणा करना और अपना जातीय गान गाना प्रारंभ किया। जब यह सब करके उन्होंने छुट्टी पाई तब तक मध्यान्ह हो आया था। मध्याह्न के उपरान्त पोपके बहिष्कारवाले आज्ञापत्र का अपमान करने के लिये विद्यार्थियों ने एक जुलूस निकाला। जो किताबे, लूथर ने जलाई थीं उनकी जितनी प्रतियाँ नगर में मिलीं वे भी सब जला दी गईं। ये सब कृत्य उस दिन प्रातःकाल से सध्या तक होते रहे। दूसरे दिन लूथर ने दर्शकों को उपदेश में बताया कि बिना पोप से नाता तोड़े मुक्ति कदापि नहीं मिल सकती। इस तरह वो जो चार दिन पहिले पोप के कार्डिनल को साष्टांग प्रणाम था आज पोप का पूरा वैरी बन बैठा।

अष्टम परिच्छेद

लूथर के धार्मिक विचार

मानसिक क्रान्ति अथवा विचारों के परिवर्तन विशेष कर धार्मिक विचारों के समूल परिवर्तन कभी भी किसी व्यक्ति विशेष मात्र की शिक्षा से नहीं होते। व्यक्ति विशेष जैसे बुद्ध या ईसा, जिन को संसार के विचारों को समूल परिवर्तन करने का सौभाग्य प्राप्त है, केवल एक केन्द्रमात्र थे जिसमें उनके समय की विचार प्रवृत्तियाँ, समाज के हृदय में दूर तक फैली हुई भावनायें, (जो यद्यपि उस समय सर्व साधारण को अव्यक्त थीं परन्तु तब भी अनुभवी विद्वानों को सुस्पष्ट थीं) एकत्रित हो, अव्यक्त से व्यक्त, अदृष्ट से दृष्ट, निःशक्त से शक्त, मूक से वाचाल, बन, इतने अनियंत्रित प्रवाह से यह निकली कि शिवजटा भ्रष्ट भागीरथी के प्रवाह की भांति फिर उनका रोकना नितान्त असंभव हो गया। वे भावनायें, वे विचार प्रवृत्तियां यद्यपि निकली, उस व्यक्ति विशेष के शरीर से परन्तु तब भी उस व्यक्ति विशेष का मानसिक क्षेत्र उन प्रवृत्तियों तथा उन भावनाओं का आदिगर्भ कभी नहीं माना जा सकता। उनका गर्भाधान अव्यक्त रूप से निश्चय उस समाज में पूर्व ही हो चुकता है जिस समाज का वह व्यक्ति विशेष उन विचार तथा भावना रूपी संतति को व्यक्ति में लाने वाला एक अंग विशेष होता है। अतएव यह प्रश्न कि सुधारक के युग का

उस भभकती हुई चिता में, पोप का आज्ञापत्र तथा पोप की प्रभुता का समर्थन करने वाले अन्य बहुत से ग्रंथ झोंक दिये गये। अग्नि में स्वाहा करते समय लूथर ने मंत्रवत् लैटिन भाषा में यह पढ़ा "तूने ईश्वर के पवित्र भक्त को दुखाया है अत तुझे अनत अग्नि चट कर जाय"। यह करने के उपरान्त लूथर तो तुरत अपने स्थान को लौट गया परतु विद्यार्थीगण जिनके लिये यह एक आनदमय उत्सव था वहाँ डटे रहे। उन्होंने उस चिता के चारों ओर प्रदक्षिणा करना और अपना जातीय गान गाना प्रारम किया। जब यह सब करके उन्होंने छुट्टी पाई तब तक मध्यान्ह हो आया था। मध्याह्न के उपरान्त पोपके बहिष्कारवाले आज्ञापत्र का अपमान करने के लिये विद्यार्थियों ने एक जुलूस निकाला। जो किताबे लूथर ने जलाई थीं उनकी जितनी प्रतियाँ नगर में मिलीं वे भी सब जला दी गईं। ये सब कृत्य उस दिन प्रात काल से सध्या तक होते रहे। दूसरे दिन लूथर ने दर्शकों को उपदेश में बताया कि बिना पोप से नाता तोड मुक्ति कदापि नहीं मिल सकती। इस तरह वो लूथर जो चार दिन पहिले पोपके कार्डिनल को साष्टांग प्रणाम करता था आज पोप का पूरा बैरी बन बैठा।

अष्टम परिच्छेद

लूथर के धार्मिक विचार

मानसिक क्रान्ति अथवा विचारों के परिवर्तन विशेष कर धार्मिक विचारों के समूल परिवर्तन कभी भी किसी व्यक्ति विशेष मात्र की शिक्षा से नहीं होते। व्यक्ति विशेष जैसे बुद्ध या ईसा, जिन को ससार के विचारों को समूल परिवर्तन करने का सौभाग्य प्राप्त है, केवल एक केन्द्रमात्र थे जिसमें उनके समय की विचार प्रवृत्तियाँ, समाज के हृदय में हुए एक फैली हुई भावनायें, (जो यद्यपि उस समय सर्व साधारण को अव्यक्त थीं परन्तु तब भी अनुभवी विद्वानों को सुस्पष्ट थीं) एकत्रित हो, अव्यक्त से व्यक्त, अदृष्ट से दृष्ट, नि शब्द से शब्द, मूक से वाचाल, बन, इतने अनियमित प्रवाह से वह निकली कि शिवजटा भ्रष्ट भागीरथी के प्रवाह की भाँति फिर उनका रोकना नितान्त असंभव हो गया। वे भावनायें, वे विचार प्रवृत्तियां यद्यपि निकली, उस व्यक्ति विशेष के शरीर से परन्तु तब भी उस व्यक्ति विशेष का मानसिक क्षेत्र उन प्रवृत्तियों तथा उन भावनाओं का आदिगर्भ कभी नहीं माना जा सकता। उनका गर्भाधान अव्यक्त रूप से निश्चय उस समाज में पूर्व ही हो चुकता है जिस समाज का वह व्यक्ति विशेष उन विचार तथा भावना रूपी संतति को व्यक्ति में लाने वाला एक अंग विशेष होता है। तात्पर्य यह प्रश्न कि सुधारक के युग का

सुधारक पर कितना प्रभाव था—अर्थात् सुधारक ने युग को सुधारा या युग ने सुधारक को सुधारा, पूर्णतया हल नहीं किया जा सकता यदि हम यह सिद्धान्त मान के चलें कि जो जिसका कारण है वह उसका कार्य नहीं हो सकता और जो जिसका कार्य है वह उसका कारण नहीं हो सकता।

सम्भव है कि नैयायिक इस सिद्धान्त को सर्वत्र अप्रतिहतगति माने परन्तु ऐतिहासिक गवेषणा करते समय तो इस सिद्धान्त की लगाम बहुत कसकर थामनी पडती है। प्रत्येक क्रान्तिकारी ऐतिहासिक व्यक्ति में और उसके युग की ऐतिहासिक अवस्था में इस प्रकार से घात प्रत्याघात का सम्बन्ध है कि प्रत्येक को बारी बारी एक दूसरे का पिता पुत्र मानना पडता है। दोनों ओर की शक्तियों में घात प्रत्याघात प्रारम्भ होता है, युग सुधारक को बनाता है सुधारक युग को बनाता है। यदि एक न होता तो दूसरा, असंभव था। एक था, अतएव दूसरा भी हुआ या यों कहना चाहिये कि एक के होने पर दूसरे का होना अवश्यम्भावी था।

लूथर जिस समय पैदा हुआ वह यौरप का परिवर्तन काल था यौरप की जनता शताब्दियों तक अंधेरे में टटोलने के उपरान्त फिर ज्ञान के प्रभात में बढ रही थी। क्रूसेड के युद्ध, नवीन और अज्ञातपूर्व देशों का ज्ञान, छापे की कल, यौनानी और रूमी सभ्यता का प्रादुर्भाव, पोपों के अत्याचार, बढती हुई जातीयता का भाव, साम्राज्यों का संगठन, फ्यूडल प्रथा का नाश, विज्ञान के प्रति बढती हुई रुचि, व्यापारिक प्रतिद्वंदता का समावेश, आदि अनेक नवीन शक्तियों उस समय के संकुचित बंधनों को प्रबल शक्ति से तोड मरोड रही थीं। जनता

को एक अव्यक्त सा ज्ञान था कि वह एक नवीन युग की ओर बढ़ रही है। ऐसे समय में यदि पुराना ईसाई धर्म भी समय के अनुसार चलने को तय्यार होता, यदि नवीनकाल के आने की सूचना देने वाले अग्रगामियों का गला नास्तिकता के अग्निसंस्कार द्वारा न घोंटा जाता तो लूथर लुथर ही रहता सुधारक कभी न बन पाता। ऐसा नहीं हुआ फल यह हुआ कि अधिक उन्नति शील ईसाई जनता पुराने धर्म से अलग हो गई। लूथर की सफलता का मुख्य रहस्य यही था कि वह अपने युग की आवश्यकता पूरी कर रहा था जो बातें लोगों के हृदय में थीं उन्हें वह मुँहसे निकाल मूर्तिमान बना रहा था। लूथर की पुस्तकें छापेखाने से बाहर आते ही धूलि की तरह उड जाती थीं कारण कि उनमें अपने युग के रोग की औषधि थी।

जैसा कि अभी तक के वर्णन से विदित हुआ होगा, लूथर एक दमही सुधारक नहीं होगया था। पोप प्रतिष्ठित ईसाई धर्म में धीरे २ उसे दोष दिखाई पडने लगे और उनके सुधार का वह उद्योग करने लगा। प्रारम्भ में जब उसने इन्डलजेन्सों पर आक्षेप किये थे, तब उसका केवल तात्पर्य इतना था, कि टरजेल ऐसे दुष्ट व्यक्ति मन मानी रीति से इन्डलजेन्स बेंच कर ईसाई धर्म को दूषित न करने पावें। लूथर लियो के पत्र में एक स्थान पर लिखता है, "परम पवित्र पिता! वे लोग जिनका मैं विरोध करता हू आपके पवित्र नाम पर धब्बा लगाने का उद्योग करते हैं आपके नाम से मन मानी मूर्खता की बातें बक के धन कमाते हैं और जब उनका विरोध करता हू कि ये सब आपकी आज्ञायें नहीं हैं तो उलटे मुझ ही को आपका

शत्रु सिद्ध करने का उद्योग करते हैं।" लूथर की यह कभी इच्छा न थी कि वह कोई नया धर्म स्थापित करे। लूथर अपने ऊपर लगये हुये नास्तिकता के आक्षेप का घोर विरोध करता था और बराबर सफलता पूर्वक सिद्ध करके दिखा देता था कि जो कुछ वह कहता या लिखता है वह सब बाइबिल संम्मत है। लूथर की यह इच्छा थी कि उसके समय का ईसाई धर्म इस तरह से सुधारा जावे कि वह अपनी आदि पवित्रता और स्वच्छता को फिर पहुच जावे। पोपों को और पोप भक्तों को ये सब अति कटु मालूम पड़ता था और इन विचारों को वे नास्तिकता के विचार कहते थे और कहें भी क्यों न; क्योंकि कहावत ही है कि "अर्थी दोषं न पश्यति"

पोपभक्त पोप को ईश्वर का प्रत्यक्ष प्रतिनिधि मानते थे। उनका विचार था कि पोप की सत्ता संसार की सब सत्ताओं के ऊपर है और अपने कार्यों के लिये संसार में वह किसी को उत्तरदाई नहीं है। बाइबिल का अर्थ जो पोपों को सम्मत हो वही माननीय है। अन्य किसी को यह अधिकार नहीं है कि वह किसी नवीन रीति से बाइबिल का कोई नवीन अर्थ करे। पोप भक्त पोप की सत्ता को अपरिमित सिद्ध करने की लालसा में इतने मुग्ध होगये थे कि वे कहने लगे थे कि सत्य कोई वस्तु नहीं है जो पोप कहे वही सत्य है। सच तो यों है कि पोपों ने बाइबिल को तो उठाकर अन्यत्र रख दिया था और अपनी स्वार्थ सिद्धि की बातों को बाइबिल सम्मत कह कर प्रचलित करते थे। यदि कोई महापुरुष इन दोषों के विरुद्ध कुछ कहता सुनता था तो जान हस या प्रेग नगरवासी जीरोम की तरह उसका भी अग्नि संस्कार कर दिया

जाता था।

ईसाई धर्मानुसार मनुष्य के सात* संस्कार होते हैं। इन संस्कारों के विषय में लूथर के सिद्धान्त और पुराने ईसाई धर्म (अर्थात् वर्तमान रोमन कैथालिक धर्म) में बड़ा मत भेद है। लूथर के विचारानुसार मनुष्य एक स्वतन्त्र जीव है अतः बलपूर्वक, उससे किसी प्रकार का सुकृति करना व्यर्थ और निरर्थक है। जिन धर्म कृत्यों को मनुष्य स्वतन्त्र बुद्धिवश और अपने अन्तरात्मा की प्रेरणा से करता है उन्हीं से वह लाभ उठाता है। अतः उसके लिये किसी प्रकार के धर्म संस्कार निश्चित कर देना जिन्हें करने को वह विवश हो, व्यर्थ का शक्ति अपव्यय मात्र है। जिन जिन धर्मों में संस्कार निश्चित कर दिये गये हैं उन धर्मों में यह देखा गया है कि उन २ धर्मों के अनुयायी थोड़े ही दिनों में यह बात भूल गये कि इन संस्कारों का वास्तविक आधार हृदय की पवित्रता है न कि बाह्य कर्म काण्डों की अक्षरशः पूर्ति। ईसाई धर्म में पाप का प्रायश्चित्त पश्चात्ताप पाप स्वीकृति, शारीरिक दण्ड इत्यादि माने गये हैं। अब प्रश्न यह है कि पश्चात्ताप पाप स्वीकृति इत्यादि के अर्थ केवल रोना धोना या औरों के सामने अपने को पापी स्वीकार कर लेना मात्र है या इनका पापी के हृदय की अवस्था से भी कुछ संबंध है। लूथर कहता था कि गिर्जों में जाना तीर्थयात्रा करना माला फेरना शारीरिक कष्ट उठा कर तप करना निराहार व्रत करना, अपने को पापी स्वीकार

* वे ये हैं, बपटीज़म् (Baptism), कनफरमेशन (Confirmation) यूकेरिस्ट (Eucharist) पेनेंस (Penance) इक्स्ट्रीम अंक्शन (Extreme unction) होली आर्डर (Holy order) मैट्रीमानी (Matrimony)

करना, इत्यादि जब धर्म द्वारा निश्चित कर दिये जाते हैं तब प्रत्येक पापी की ऐसी धारणा होजाती है कि पाप मोचन के लिये यह पर्याप्त है कि उसने किसी पादड़ी के सन्मुख पाप स्वीकार कर लिया है, दसरोज निराहार व्रत कर लिया है, सौ वार माला फेर, पवित्र स्थान गिर्जे में हो आया है, या किसी तीर्थस्थान की यात्रा कर आया है इत्यादि २। इन बाह्य कर्म काड के आंडबरों में फँसे होने के कारण उस पापी को कभी स्वप्न में भी यह सोचने का अवसर नहीं मिलता था कि जब तक उसका हृदय पश्चात्ताप से पूर्ण नहीं है, जब तक उसके हृदय में ईश्वर की भक्ति का प्रकाश नहीं फैला है, जब तक वह भविष्य में सच्चे हृदय से पाप न करने का प्रण नहीं करता है तब तक उसे बाह्य आडवरों से कोई लाभ नहीं होसकता। लूथर के विचारानुसार इन सब बातों से पापी के पाप की निवृत्ति तबही हो सकती है जब वह इन्हें स्वयं अपनी स्वतंत्र बुद्धि से स्वीकार करे। रोना अनुताप पूर्ण हृदय का बाह्य लक्षण है। यदि हृदय अनुताप पूर्ण नहीं है तो रोने से कोई लाभ न होकर वरन् बहुत कुछ हानि ही है। ठीक इसी सिद्धान्त का फल रूप लूथर ने यह भी सिखाया कि पश्चात्ताप आदि कृत्यों के लिये किसी पादड़ी इत्यादि अन्य व्यक्ति के उपस्थित की आवश्यकता नहीं है। पश्चात्ताप आदि हृदय की अवस्थायें हैं। इनकी पर्याप्तता या अनपर्याप्तता का ज्ञान पापी को हो सकता है या उस ईश्वर को जिसके सम्मुख वह पश्चात्ताप करता है। पादड़ी बिचारा किसी के हृदय को क्या जाने। अत उसकी उपस्थिति की कोई आवश्यकता नहीं है। ११ अक्टूबर सन् १५२३ ईस्वी को लूथर एक मित्र को यों लिखता

है, "यह सत्य है कि मैंने कहा है कि पाप स्वीकृति एक अच्छा कार्य है। इसी तरह मै किसी को निराहार व्रत करने या तीर्थ यात्रा करने से भी नहीं रोकता। मेरे सब कहने सुनने का तात्पर्य केवल इतना ही है कि मैं इन कार्यो को व्यक्तियो की विवेक बुद्धियों पर छोड देना चाहता हू (चाहे वे करें चाहे न करें) और इनका न करना मैं कभी घोर पापों में गिनने को प्रस्तुत नहीं हू। मैं सब मनुष्यों की अतरात्मा को बिलकुल स्वतत्र कर दिया चाहता हू—"

पोपो का ईसाई धर्म सारा ध्यान मनुष्य के बाह्य कृत्यों की ही ओर देता था। यदि धर्म विहित कर्म काडों को मनुष्य करता जावे तो वह धार्मिक है यदि न करे तो वह पापी है। लूथर कहता था कि धर्मोपदेशकों का कर्तव्य है कि वे सारा जोर इस बात के सिखाने पर दें कि धर्म का सम्बध हृदय की पवित्रता तथा स्वच्छता से है। यदि मनुष्य का हृदय पवित्र है तो वह धार्मिक है यदि उसका हृदय पवित्र नहीं है तो वह अधार्मिक है। "तुम पूछते हो" लूथर लिखता है "कि "मास" पूजा किस प्रकार की जाय। मैं प्रार्थना करता हू मुझ से इन विवरणों और विस्तारों को न पूछो। मेरा कहना यही है कि इन सब विषयों में अन्तरात्मा को स्वतत्र रक्खो। किसी भी पूजा करने की विधियाँ इतने महत्व की कभी नहीं हो सकती कि हम अपनी आत्मा को उन विधि विशेषों का दास बना डालें। जितने नियम उपनियम अभी तक बन है मेरी बुद्धि में तो वे ही आवश्यकता से अधिक हैं।"

लूथर के पूर्व सारे धार्मिक कृत्य लैटिन भाषा में होते थे। लैटिन कुछ इने गिने पादड़ियों को छोड और किसी को

आती थी। लूथर ने सिखाया कि प्रत्येक धार्मिक कृत्य प्रत्येक पूजा उस भाषा में होना चाहिये जो उन धर्मानुयायियों की मातृ भाषा हो। ऐसा करने से उसका तात्पर्य यह था कि प्रत्येक व्यक्ति जो करे उसे समझे और परमात्मा के सम्मुख जाने के लिये लैटिन भाषा विश किसी पादड़ी की वकालत की उसे कोई आवश्यकता न रहे। लूथर लिखता है "बपतिस्मा हम भी करते हैं भेद इतना है कि यह मातृभाषा (जर्मनी भाषा) में होता है"।

पोपों के युग में महन्तों के मठ और साधुओं के संघ बरसाती मेंढकों की भाँति बढते जाते थे। इन सब साधु महन्तों को आजन्म अविवाहित रहने की शपथ खानी पड़ती थी। लूथर यद्यपि स्वयं महन्त था परन्तु तब भी वह इन साधु मठ और संघों से बड़ा घबड़ाता था। अविवाहित रहने की शपथ तो उसे विशेषकर कांटे की भांति चुभती थी क्योंकि उसने महन्त होकर खूब अनुभव प्राप्त कर लिया था कि यह शपथ ही मठों और संघों के बढ़ते हुए व्यभिचार का कारण है। लूथर ने यह शिक्षा दी कि विवाह करना सबका धर्म है चाहे साधू हो चाहे गृहस्थ। लूथर लिखता है "यह परमात्मा की आज्ञा के विरुद्ध है कि हम मनुष्यों से ऐसे प्रण करा लें कि जिन्हें प्राकृतिक स्वभाव सदा तोड़ने को तयार रहता है यदि मेरे घोर शत्रु इस बात को जानते कि मठों में कैसे २ व्यभिचार होते हैं तो मुझे पूर्ण आशा है कि मठ और साधु संघ की प्रथा नाश करने में वे मुझे पूर्ण सहायता देते" रोमन कैथोलिक साधु होने को एक संस्कार मानता था अतः साधु होने के उपरान्त सदा साधु ही रहता था वह फिर मरने के पूर्व गृहस्थ नहीं

सकता था। लूथर साधु होना संस्कार नहीं मानता था। उस के विचारानुसार प्रत्येक साधु जब चाहे साधु कर्म छोड़ गृहस्थ बन सकता है। लूथर कहता था कि साधु और कृषक में यही भेद है कि साधु का कर्म धर्मोपदेश है और कृषक का कर्म कृषी है। कर्म भेद को छोड़ इन दोनों में संस्कार भेद कुछ भी नहीं है, अतः साधु जब चाहे गृहस्थाश्रम को लौट सकता है।

बाइबिल के विषय में लूथर का विचार था कि बाइबिल समझने के लिये किसी को भी बड़े भाष्यों के पढ़ने तथा अनेकों बाइबिल अध्ययन के नियमों को जानने की कोई आवश्यकता नहीं है। बाइबिल के अर्थ सीधे और सरल हैं। यदि मनुष्य वास्तव में बाइबिल समझना चाहता है तो बिना भाष्यकारों की सहायता के भी वह बाइबिल समझ सकता है। बाइबिल के भाष्यकारों पर लूथर को बहुत कम श्रद्धा थी।



हुआ और वह चार्ल्स से बड़ी ईर्षा रखने लगा। दोनों चार्ल्स और फ्रैंसिस पोप को अपना मित्र बनाने का उद्योग कर रहे थे कारण कि जिसकी ओर पोप होता था उसकी तलवार दुधारी हो जाती थी और वह अपने शत्रु से स्पष्ट कह सकता था कि "क्रोधस्य ज्वलितु झटित्यवसरश्चापेन शापेन वा"।

पोप अपने शत्रु लूथर से बहुत घबड़ा गया था अत पोप लूथर को चार्ल्स की सहायता से कुचलना चाहता था। पोप को चार्ल्स की सहायता लूथर के नाश के लिये चाहिये थी और चार्ल्स को पोप की सहायता फ्रैंसिस को नीचा दिखाने के लिये चाहिये थी। दोनों स्वार्थियों में समझौता हो गया। पोप चाहता था कि चार्ल्स लूथर को यों ही दंड दे दें। चार्ल्स भी पोप को प्रसन्न करने के लिये सब कुछ करने को प्रस्तुत था। परन्तु लूथर की रक्षा सारा जर्मनी करने को प्रस्तुत था। अत चार्ल्स का यह साहस न हुआ कि वह पोप की प्रसन्नता के लिये सारे जर्मनी में विद्रोहाग्नि भड़कावे। चार्ल्स को सबसे अच्छी विधि यही देख पड़ी कि वह लूथर को धर्म्म की राजसभा में बुलाकर कम से कम न्याय का दिखावा निश्चय करे।

अलीयन्डर पोप की ओर से इस बात का बड़ा उद्योग कर रहा था कि लूथर को धर्म्म की सभा में आने का अवकाश न मिले क्योंकि उसे भय था कि ऐसा करने से लूथर को अपने बचाव का समय मिलेगा और उसकी उपस्थिति और उपदेश को देख सुन उसके पक्षवालों का उत्साह द्विगुणित हो जायगा। अलीयन्डर चार्ल्स से मिला उसने चार्ल्स से स्पष्ट कह

दिया कि नास्तिकों, का न्याय करने का अधिकार एक मात्र पोप ही को है क्योंकि वह समस्त ईसाई संसार का धर्म पिता है भौतिक सम्राटों का तो एक मात्र इतना ही कर्तव्य है कि पोप जिसे नास्तिक कहे उस वे अपनी भौतिक शक्ति की सहायता से पोप की ,इच्छानुसार दंड दे । अलीयन्डर ने कहा कि लूथर को राजसभा में बुलाकर उसका न्याय करना मानो पोप का धार्मिक अधिकार छीन कर उसका अपमान करना है । जब पोप ने लूथर को नास्तिक कह दिया तब किसी भौतिक शक्ति को पोप के न्याय में संदेह करने का साहस कैसे हो रहा है।-अलीयन्डर ने बडी भारी वक्तृता दी और लूथर को पूरा नास्तिक सिद्ध करने में कुछ उठा न रक्खा । वक्तृता समाप्त होने के उपरान्त उसने चार्ल्स से कहा, "मुझे केवल दो प्रार्थनायें करनी हैं—प्रथम तो आप घोषणा करा दें कि लूथर लिखित जितने ग्रंथ मिलें सब जला दिये जावें, दूसरी यह कि या तो आप स्वयं लूथर को प्राण दंड दें या आजन्म कारागार दें या उसे पोप ,के हवाले कर दें" । इस धर्मोपदेश का यह फल हुआ कि चार्ल्स ,अलीयन्डर की इच्छा पूरी करने को प्रस्तुत हो गया । लूथर के हितैषी बड़े घबडाये। उन सब ने मिल कर ऐसी नीति का घोर विरोध किया। अंत में चार्ल्स को अपने सामन्तों का कहना मानना पडा और लूथर को बुलाने के लिये उसके नाम निम्नलिखित आज्ञा पत्र निकाला गया । "माननीय, प्यारे भक्त लूथर ! हमने और पवित्र रोम साम्राज्य की सभा ने जो इस समय वर्म्स में एकत्रित है यह निश्चित किया है कि तुमसे तुम्हारे धर्म,तथा धार्मिक ग्रंथों के विषय में कुछ स्पष्टीकरण कराया जाय । अत तुम्हें यह 'अभयदान पत्र'

भेजा जाता है कि तुम अपने को अभय समझो इस अभयदान पत्र के पाते ही तुम तुरत रवाना होजाओ, क्योंकि ऐसी ही हमारी इच्छा है और हमारे आज्ञापत्र के पाने के बीस दिवस उपरान्त राजसभा में आ उपस्थित हो। तुम्हें किसी प्रकार के बलात्कार अथवा गुप्तपाश का भय न करना चाहिये। हमारी इच्छा है कि तुम हमारी राज प्रतिज्ञा का विश्वास करो और हमारी तीव्र इच्छा का अनुगमन करो"। जिसे पोप ने नास्तिक कह कर दंड देने को कहा है उसे "माननीय प्यारे भक्त लूथर" सबोधित करके साम्राज्य सभा इतने मान से बुला रही है यह अलेयन्डर को असह्य प्रतीत हुआ। उसने इसका घोर प्रतिवाद किया। परन्तु बिचारा करे क्या पोप का प्रताप सूर्य अस्ताचल की ओर बढ़ रहा था इसके आगे का वर्णन लूथर स्वयं यों करता है "राजदूत ने मुझे मंगलवार को बुलाकर अभयदान पत्र दिखाया। यह अभयदान पत्र सम्राट तथा और राजे महाराजा की ओर से था। परन्तु उस ही के दूसरे दिन अर्थात् बुद्ध ही को उस राजपत्र की प्रतिज्ञायें वर्म्स में तोड़ी गई। वर्म्स में मै नास्तिक स्थिर किया गया और मेरी लिखी पुस्तकें जलाई गई। इन घटनाओं का सवाद मुझे वर्म्स पहुँचने पर मिला। यही नहीं, मेरी दंड आज्ञा पूर्व ही सब नगरों में प्रकाशित हो चुकी थी यहा तक कि राजदूत ने मुझ से पूछा भी कि क्या मैं यह सब देख सुनकर भी वर्म्स जाने को प्रस्तुत हू। मैंने उत्तर दिया कि मैं वर्म्स जाऊंगा चाहे वहाँ इतने शैतान क्यों न हों जितने इस खपरैल पर खपड़े हैं। जब मैं वर्म्स के निकट आपेनहीम के पास पहुचा तो वहाँ का रहने वाला मास्टर बूसर मुझे वर्म्स जाने से बड़ा निषेध करने

लगा। उसने कहा कि सम्राट के पादड़ी ने मुझ से कहला भेजा है कि आप वर्म्स कदापि न जायँ, नहीं तो आपको वे लोग जला देंगे। यह सब करने से उन दुष्टों का तात्पर्य यह था कि मैं अपने मार्ग में देर करू और अभयदान पत्र की अवधि बीत जाय। वे जानते थे कि यदि मैं इन सब सोच विचारों में पड तीन दिन और ठहर जाऊँगा तो मेरा अभय दान पत्र मुझे न बचा सकेगा। मैं वर्म्स में न घुसने पाऊंगा और बिना मेरी सुनवाई हुए ही मुझे दण्ड दे दिया जायगा। परन्तु मैं निर्दोष था और अपनी निर्दोषता के भरोसे मैं बराबर चलता ही गया। मैं वर्म्स पहुँच गया और मैंने फ्रेडरिक के मन्त्री को समाचार भेजवाया कि मैं आगया हू और मुझे समाचार दे कि मुझे कहाँ ठहरना होगा। मेरे आने का समाचार सुन सब को बडा अचम्भा हुआ क्योंकि उनको विश्वास था कि मेरा भय मुझे दुष्टों के जाल में फसा देगा और मैं निश्चित समय के भीतर वर्म्स कदापि न पहुच पाऊं गा।

फ्रेडरिक के भेजे हुये दो सभ्य पुरुष मेरे पास आये, और मुझे उस गृह को ले गये जहा मेरा ठहरना निश्चित हुआ था। उस समय तो मेरे पास कोई राजे महराजे मिलने न आये लेकिन कुछ ने मेरी ओर बडी दृढता से देखा। ये वे राजे महाराजे थे जिन्होंने पूर्व ही से सम्राट को एक विज्ञप्ति देख रखी थी। इस विज्ञप्ति में पोप के प्रति लगभग ४०० दोष लगाये गये थे और सम्राट से प्रार्थना की गई थी कि आप पोप को इन सब दोषों का सुधार करने के लिये विवश करें; और यदि ऐसा न होगा तो हम अपने अपने रोग की औषध आप कर लेंगे।

'पोप ने सम्राट को लिखा था की आप को अभयदान पत्र की लाज रखने की कोई आवश्यकता नहीं है। पादड़ी लोग सम्राट को पोप की प्रार्थना पूर्ण करने के लिये उत्साहित कर रहे थे। परन्तु राजे महाराजे ऐसा करने को प्रस्तुत न थे और बहुत कुछ सम्भव था कि यदि ऐसा किया जाता तो बहुत बड़ा गोल माल खड़ा हो जाता। इन सब घटनाओं ने जनता में मेरी ख्याति और भी बढ़ा दी। और मेरे शत्रु जितना में उनसे नहीं डरता था उससे कहीं ज्यादा मुझसे डरने लगे।

लूथर संध्या को ४ बजे सभा में बुलाया गया। लूथर को इस समय अपने सारे धैर्य्य को एकत्रित करने की आवश्यकता पड़ी। लूथर राजसभा में पहुंचा। राजसभा में स्पेन, इटली आस्ट्रिया, जर्मनी आदि देशों के बड़े २ राजे महाराजे और उच्च पदस्थ पादड़ी गण बड़े ऐश्वर्य से अपने दिव्य वसन भूषण पहिने हुये यथा स्थान बैठे थे। लूथर ने यद्यपि बड़ी वीरता के साथ पुस्तकों द्वारा पोप और उसके अनुयायियों से युद्ध किया था परन्तु उस कृषक पुत्र को ऐसी ऐश्वर्यमय राजसभाओं में जाने का अभ्यास न था। वह इस महा-सभा के सामने आने पर एक प्रकार से घबड़ा गया। उसके सामने ही नवयुवक सम्राट अपने स्पेनी पादड़ी और सामंतों से घिरा हुआ बैठा था। सारी राजसभा गंभीरता की मूर्ति बनी हुई थी। यद्यपि सबकी दृष्टि उसही की ओर थी परन्तु लूथर उन दृष्टियों में न तो किसी प्रकार से उसे उत्साहित करने की इच्छा न भर्त्सना देने का लक्षण पाता था। उसके एक ओर एक मेज पर कुछ पुस्तकों का ढेर

लगा था।

सभा का कार्य प्रारंभ हुआ। सम्राट के दूतने खड़े होकर लूथर को आज्ञा दी कि जब तक तुम्हें बोलने का कोई अधिकार नहीं है जब तक तुम से कुछ पूंछा न जाय। दूत के बैठने के उपरान्त ट्रायर का बडा पादडी खडा हुआ। उसने पहिले लैटिन और फिर जर्मन भाषा में लूथर से कहा कि सम्राट की आज्ञा से मैं प्रश्न पूछता हू। "प्रथम क्या तुम स्वीकार करते हो कि सामने ढेर लगी हुई पुस्तकों के रचयिता तुम्ही हो? द्वितीय क्या तुम इन पुस्तकों के सिद्धान्तों से भविष्य में विमुख होने को प्रस्तुत हो?, इतने में डाक्टर जीरोम जो लूथर का एक प्रकार से वकील था। बीच ही में बोल उठा। कृपा कर इन पुस्तकों के नाम पढ डालिये। इसके उत्तर में एक एक करके पुस्तकों के नाम पढे गये। इसके उपरान्त लूथर ने जो बहुत भयभीत होगया था बडे धीमें स्वर में कहा "मैं इन पुस्तकों का रचयिता होना अस्वीकार नहीं कर सकता। परन्तु दूसरे प्रश्न का उत्तर देना कठिन है,,। (इस बीच में लूथर ने अपना धैर्य एकत्रित कर लिया था और अब साहस के साथ बोल रहा था) 'इस प्रश्न के उत्तर और मेरे धार्मिक विश्वास तथा आत्मा की मुक्ति से बडा घनिष्ट सबन्ध' है। यह प्रश्न बाइबिल से सबन्ध रखता है जिससे बढ कर महत्व की वस्तु न स्वर्ग में है न इस ससार में, यदि मैं बिना सोचे विचारे बोलूं तो बहुत कुछ सभव है कि मैं अति साहस वश प्रभु ईशु की इस आज्ञा का उल्लघन कर जाऊ कि "जो कोई मुझे मनुष्यों के सम्मुख अस्वीकार करेगा उसे मैं अपने स्वर्गीय पिता के सामने अस्वीकार करूगा,, अत में दयानिधि

यों लिखता है, "लेकिन मैं एक अक्षर से भी विमुख न होऊँगा" प्रभु इशु मेरे अनुकूल रहे। सध्या तक अपने को इस तरह दृढ़ बना लूथर दूसरे दिन की प्रतीक्षा करने लगा।

अट्ठारवीं तारीख की सभा जिस स्थान पर हुई थी वह बहुत अधिक बड़ा था। परन्तु उस दिन भीड़ इतनी अधिक थी कि बड़े बड़े राजा महराजाओं को भी स्थान मिलना दुष्कर होगया। लूथर नियत समय पर सभा में उपस्थित हुआ। परन्तु सभा उस दिन कुछ कारणों वश नियत समय से अपना काम प्रारम्भ न कर सकी। ४ बजे का समय नियत था परन्तु सभाने लगभग ६ बजे अपना काम प्रारम्भ किया पूर्व दिन का द्वितीय-प्रश्न उससे फिर पूछा गया। अब की बार लूथर ने बड़ी दृढ़ता से उत्तर देना प्रारम्भ किया। उसने अपने सारे ग्रन्थों को तीन विधि के बताये। उसने कहा मेरे कुछ ग्रथ तो ऐसे हैं जिनमें केवल वे ही बातें लिखी हैं जो बाइबिल में लिखी हैं। अत ईसाई होता हुआ उनसे मैं कैसे विमुख हो सकता हूँ। दूसरी विधि के वे ग्रथ हैं जिनके द्वारा मैंने पोप के कृत्यों पर आक्षेप किया है, वे आक्षेप इतने सत्य ससार—विदित और स्पष्ट हैं कि उनसे विमुख होना मेरी शक्ति के बाहर है। बाकी रहे वे ग्रथ जिनमें उसने अपने प्रति द्वन्दियों के ऊपर आक्षेप किये हैं। उसने कहा मैं मानता हूँ कि इन आक्षेपों को करते समय मैं आवश्यकता से अधिक कटु हो गया था परन्तु तब भी मैं उनको तब तक लौटा नहीं सकता जब तक उनमें कोई त्रुटि न दिखा दी जाय। लूथर ने अपनी ये वक्तृता जो न बहुत लम्बी थी न छोटी, बड़ी दृढता और सौन्दर्य के साथ दी थी।

इसके उपरान्त उसका पूर्व का प्रतिद्वन्दी "ईक" उठ खडा हुआ उसने कहा लूथर के ग्रथों में भी वेही दोष है जो वाइक्लिफ,, या "हस" के ग्रथों में थे और फिर उसने लूथर की ओर मुख करके कहा "दो शब्दों में उत्तर दो 'हा' या 'नहीं' मुझे लम्बी चप्पो नहीं अच्छी लगती। इतना सुनते ही लूथर भडक उठा और बोला "लीजिये यदि आप लोग सरल उत्तर चाहते हैं तो सरल ही उत्तर लीजिये । जब तक बाइबिल से या सरल और स्पष्ट कारणों द्वारा मेरे दोष मुझे न दिखा दिये जायें तब तक मैं अपने कहे और लिखे एक शब्द से भी विमुख नहीं हो सका हूं। न होना चाहता हूं। क्योंकि अतरात्मा से विमुख होना न उचित है न धर्म है ईश्वर मेरी सहायता करें"।

ये सुनकर सभासदगण लोग विचार करने के लिये अलग चले गये और उन्होंने लौटकर यों कहना प्रारभ किया "मार्टिन ! तुम एक ऐसी बात कह रहे हो-जो तुम्हारे ऐसे पुरुष को कहना उचित नहीं है। जो प्रश्न तुम से किया गया था उसका उत्तर तुमने कुछ नहीं दिया। तुमने उन विवाद विषयों को पुन जीवित किया है जो कान्स्टेन्स की सभा द्वारा सदा के लिये दडित मान जा चुके हैं। तुम चाहते हो कि वेही दोष बाइबिल के प्रमाण से पुनर्वार दिखाये जायें। लेकिन यदि प्रत्येक मनुष्यों को यह स्वतत्रता दी जाय कि वह उन विषयों को जो धर्म सभाओं द्वारा सदा के लिये निर्णीत हो चुके हैं अपनी इच्छानुसार जब चाहे उठा सका है तो प्रश्न यह होता है कि फिर क्या कोई धर्म सिद्धान्त निश्चित कहा जा सका है? उदाहरण के लिये आज तुम कान्स्टैन्स की धर्मसभा का निर्णय मानने को प्रस्तुत नहीं हो। कल तुम समस्त धर्म सभाओं

को अप्रमाणिक कह सके हो। फिर बनाओ प्रणाम कौन वस्तु हो सकेगी। अतः सम्राट तुम से संक्षिप्त और सरल उत्तर चाहते हैं कि तुम अपने सब सिद्धान्तों की रक्षा करने को प्रस्तुत हो या उनमें से किसी के विमुख होना चाहते हो"। लूथर ने इसके उत्तर में कहा कि जो कुछ मैंने कहा है उससे अधिक मैं कुछ नहीं कह सकता। "जब तक बाइबिल के स्पष्ट प्रमाणों द्वारा मेरे दोष न दिखाये जायें मैं अपने एक अक्षर से भी फिरने वाला नहीं हू" । यदि धर्म सभाओं की बात चलाते हो तो धर्म सभाओं के निर्णयकोई धार्मिक सिद्धान्त नहीं है। धर्म सभाओं के निर्णय बहुधा परस्पर विरोधी और प्रमाद पूर्ण हुए हैं। अत वे प्रमाण नहीं माने जा सकते; और यह कि मैं, बाइबिल में लिखी बातों से कभी विमुख नहीं हो सकता"। इस पर सभा की ओर से कहा गया कि क्या तुम धर्म सभाओं के दोष दिखा सकते हो। लूथर ने बडे आवेश से कहा कि ऐसा करने को मै हर समय प्रस्तुत हू।

सम्राट ने यह समझ कर कि अधिक वाद विवाद से कुछ लाभ नहीं है सभा विसर्जित कर दी। लूथर अपने निवास स्थान को लौट आया। स्थान पर पहुँचते ही उसने हाथ ऊपर उठा कर बडे आनद से कहा "मेरी अग्नि परीक्षा पूरी हो गई। मै अग्नि परीक्षा में उत्तीर्ण हो गया। उस ही दिन उसने फ्रेडरिक के मत्री से कहा—"यदि मेरे सहस्र मस्तक होते और एक २ कर काटे जाते तब भी मै अपने सिद्धान्तों से विमुख होने वाला न था"। फ्रेडरिक ने अपने मत्री से कहा कि 'आज लूथर की दृढता से मैं बहुत सतुष्ट हुआ'। सतुष्ट होने की बात भी थी लूथर ने दृढता पूर्वक यह दिखा दिया

था कि बाइबिल, अन्तरात्मा और बुद्धि के प्रमाणों के आगे पोप, पादड़ी और धर्म सभाओं के निर्णय कोई वस्तु नहीं है।

उन्नीस अप्रैल के प्रातःकाल सम्राट ने फिर सभा की। लूथर को क्या दण्ड दिया जाय इस विषय पर विचार होने वाला था। सभा ने कहा कि दण्ड निश्चित करने के लिये हमें थोड़ा समय चाहिये। सम्राट ने इसके उत्तर में कहा-कि पहिले मेरा विचार सुन लो। यह कह कर सम्राट ने एक बड़ा चिट्ठा निकाला जिसमें लिखा था कि सम्राट तथा उसके पूर्वज सदा से सच्चे पोपभक्त होते चले आये हैं। अतः जो कुछ उसके पूर्वजों की सम्मति और जो धर्म सभाओं की आज्ञा है वही वह भी करेगा। लूथर ने अपने विचारों से स्पष्ट कर दिया है, विवाह सारे ईसाई संसार का शत्रु है। समस्त सभाने फल जान लिया कि लूथर कैसा हठी नास्तिक है। अतः अब उससे किसी प्रकार का सम्बन्ध रखना व्यर्थ है। हमारी इच्छा है कि उसके अभयदान की अवधि २१ दिन के लिये और बढ़ा दी जाय और इस अवधि के पूर्व ही लूथर अपने स्थान को पहुंचा दिया जाय। परन्तु इस अवधि के भीतर उसे किसी प्रकार का उपदेशादि देने का अधिकार न होगा। "और जैसा कि मैंने पूर्व कहा है ये हमारी राजेच्छा है इसके उपरान्त उसको वही दण्ड दिया जाय जोकि सच्चे और प्रमाणित नास्तिक को दिया जाना चाहिये,,।

यद्यपि सम्राट ने अपनी इच्छा को इतना स्पष्ट कह दिया था परन्तु तब भी बहुत ऐसे सभासद थे जिनका विचार था कि अभी लूथर को और समय मिलना चाहिये। सम्राट के उपरोक्त विचार पर शुक्र और शनिश्चर को बराबर वाद

विवाद होता रहा। अंत में यही निश्चय हुआ कि लूथर को अभी और समय दिया जाय। सब सभासदों ने मिलकर सम्राट से प्रार्थना की कि बहुत बड़े बड़े विद्वान् पादड़ियों का एक कमीशन लूथर के पास भेजा जाय। और वे लूथर से शास्त्रार्थ कर उसे उपदेश देने का उद्योग करें। यदि तब भी लूथर अपनी नास्तिकता पर दृढ़ रहे तो उसे समुचित दंड दिया जाय। सम्राट ने अपना विचार ऐसा दृढ़ कर लिया था कि यद्यपि यह प्रार्थना बहुत सहल थी यदि कुछ विचित्र घटनायें उसे विवश न करतीं तब भी वह उसे कदापि न मानता उन्नीस और बीस अप्रैल की रात को राजद्रोह के स्पष्ट लक्षण दिखाई पड़ने लगे। उसके शयनागार में एक पत्र मिला जिसमें लिखा था, कि "उस देश के भाग्य फूट गये हैं जिसका राजा बच्चा है।" नगर में यत्रतत्र विज्ञापन चिपके हुए मिले जिनके द्वारा लगभग आठ सहस्त्र योद्धाओं ने यह सूचना दी थी कि यदि लूथर को कुछ कष्ट पहुचाया गया तो उस पोप के विरुद्ध घोर युद्ध करेंगे। ब्रैंडन वर्ग और सेक्सनी के राजाओं ने बहुत दबाव डाला। इन सब घटनाओं वश सम्राट चार्ल्स पंचम ने सभा की बात मान ली। सम्राट ने कहा कि हमारा विचार पलट नहीं सकता परन्तु तब भी हम तीन दिवसों का समय देने को तैय्यार हैं। यदि इन तीन दिवसों के अन्दर लूथर अपनी नास्तिकता स्वीकार कर उसे त्यागने को प्रस्तुत होजाय तो बहुत अच्छी बात है और नहीं तो उसको दंड दिया जायगा।

आठ उच्च पदस्थ व्यक्तियों का एक कमीशन लूथर के पास गया। उनके बाद विवाद का विवरण देना व्यर्थ है। लूथर ने पूर्ववत् केवल एक बाइबिल ही को प्रमाण मानने की हठ की

बाइबिल के अतिरिक्त यदि उसके लिये और कोई वस्तु प्रमाण थी तो वह बुद्धि और तर्क था। भला ऐसी अवस्था में समझौता होना कब सम्भव था। कमीशन लौट आया। पूर्व इसके कि कमीशन अपनी रिपोर्ट राजसभा को दे, कमीशन के अध्यक्ष ने लूथर को अपने निज के कमरे में बुलाकर बहुत कुछ समझाया बुझाया। परन्तु लूथर अपने विचारों से न डिगा। यह सब हो जाने पर सभा को कमीशन की असफलता की रिपोर्ट की गई। इसके बाद राजसभा ने अपने और कार्य करना शुरू किये जिनके लिये वास्तव में सभा की गई थी और जो अभी तक लूथर के कारण रुके पड़े थे। राजसभा की अंतिम बैठक २५ मई को हुई।

यद्यपि लूथर की दंडाज्ञा पर सम्राट के हस्ताक्षर २६ मई को हुए थे परन्तु उसमें तारीख आठ मई की डाली गई थी उस राजाज्ञा से पहले तो लूथर की नास्तिकता का बड़ा जुगुप्सित वर्णन किया गया था। उसके उपरान्त सम्राट के न्याय और पोप की निःसीम दयालुता की शेखी बघारी गई थी। इसके उपरान्त ये लिखा गया था कि आज से लूथर और उसके अनुयायी राज-रक्षा तथा कानून की शरण से वंचित किये गये। (जिसका तात्पर्य यह होता था कि लूथर तथा उनके अनुयायियों के मारने तथा लूटनेवाले को राजदंड का कोई भय नहीं है) और उसकी सारी पुस्तकें जहां पाई जावें जला दी जावें।

लूथर २६ अप्रेल को विटेनवर्ग के लिये लौट पड़ा। उसकी रक्षा के लिये वेही लोग उसे विटेन्वर्ग से लाये थे। लूथर उचित २ दूरी पर पड़ाव डालता हुआ विटेन्वर्ग को ओर

पढ रहा था कि शनिश्चर के दिन ४ मई को एक छोटे से नाले के करीब थुरिंजियन वन के बीच उसके ऊपर कुछ अश्वारोहियों ने आक्रमण किया और इतनी सफाई से लूथर को पकड ले गये कि किसी के किये कुछ न बन पडा। लूथर के पकड ले जाने वाले शत्रु थे या मित्र यह बात किसी को मालूम न थी। लोग लूथर के विषय में मनमानी गप्पें लडाने लगे। कोई कहता था लूथर कहीं छिप रहा है दूसरे कहते थे कि लूथर मार डाला गया है परन्तु वास्तविक घटना का किसी को कुछ पता न था।

दशम परिच्छेद

लूथर का अज्ञातवास

सेक्सनी के प्रभु फ्रेडरिक को विश्वास होगया था कि लूथर को अपनी हठवश घोर दंड सहना पडेगा। फ्रेडरिक ने सोचा कि राजसभा के बहुमत द्वारा दंडित किये जाने पर उसके लिये यह असंभव होगा कि वह पूर्ववत् लूथर को अपनी शरण में रख सके और यदि वह लूथर को अपनी शरण से वंचित करेगा तो लूथर के शत्रु उसे बिना नाश किये न मानेंगे। यही सब सोचकर फ्रेडरिक ने यह निश्चित किया कि लूथर को छिपाकर रखना चाहिये। यही कारण था कि फ्रेडरिक ने लूथर को बहुत शीघ्र विटेन्बर्ग की ओर जाने की आज्ञा दी थी। ऐसा करने से फ्रेडरिक की हार्दिक इच्छा यह थी कि वह लूथर को दंडित होने के पूर्व ही छिपा सके। लूथर को छिपा रखने की बात इतनी गुप्त रक्खी गई थी कि यह फ्रेडरिक के भाई जान तक को अविदित थी। सच पूछिये तो लूथर स्वयं अपने छिपाये जाने के विषय में कुछ नहीं जानता था। यद्यपि जीवनी लेखकों का इस विषय में मतभेद है। लूथर को इस प्रकार छिपा रखने से कई लाभ हुए। लूथर के शत्रु लूथर से बदला न ले सके। लूथर के मित्र और उदासीन व्यक्ति भी इस विचार से कि पोप पक्षवाले ऐसे दुष्ट हैं कि उन्होंने अभयदान की अवधि के भीतर ही लूथर को पकड़ कर बंदी कर लिया

और मार डाला, पोप पक्षवालों से इतने रुष्ट हो गये थे कि मरने मारने को कटिबद्ध होगये।

अपने वंदी होने का वर्णन लूथर स्वयं यों करता है "मैंने अपने माता पिता से मिलन के लिये वन पार किया और उनसे मिलकर वाल्टरहासेन जाने की इच्छा से आगे बढ़ा ही था कि आल्सटेन्होन दुर्ग के निकट वंदी कर लिया गया। मेरे मित्र ने अश्वारोहियों को आते देख विना पूछे जांचे तुरत गाडी से कूद अपनी जान बचाई और पीछे से मुझे मालूम हुआ कि वह पैदल ही वाल्टरहासेन पहुंचा। मेरे वस्त्र उन लोगों ने उतार लिये और पल्टनियों कपडे पहना दिये। मेरे झूठी दाढ़ी लगाई गई। मैंने भी अपनी दाढ़ी बढ़ाना प्रारम्भ किया अब तुम मुझे पहिचान नहीं सकते हो। सच बात तो यह है कि मैं स्वयं अपने को नहीं पहिचान पाता। यहां मैं ईसाईवत् स्वतन्त्र रहता हूं। यहां मुझे किसी प्रजा पीडक राजा के दंड का भय नहीं है"। लूथर के वंदी करने वाले उसे वार्टवर्ग के दुर्ग को ले गये। यह दुर्ग का दुर्ग और राजमहल का राजमहल था। यहां लूथर का नया नाम रिटर जार्ज रक्खा गया। निकट के लोग समझते थे कि कोई योद्धा वंदी है क्योंकि लूथर ने यहां महन्तों के से वस्त्र पहिनना छोडकर भले घर गृहस्थों के समान कपडे पहिनना प्रारम्भ किया था। लूथर ने दाढी बढाई और असि धारण करना प्रारम्भ किया। दुर्ग के सब लोग उसका बहुत मान करते थे। वह किले ही में न घुसे रहते थे परन्तु बहुधा वेष बदल कर थोडी दूर तक घूम भी आया करते थे। कभी २ आखेट खेलने भी जाया करते थे।

इस अज्ञातवास में लूथर ने एक ऐसा कार्य किया

जिससे जर्मन साहित्य और धार्मिक जीवन में एक नया युग प्रारम्भ होगया। लूथर ने बाइबिल को (New Testament) जर्मन भाषा में उल्था किया। इसके पूर्व बाइबिल जर्मन भाषा में न थी। यह न समझना चाहिये कि लूथर ने यह काम केवल अपना समय बिताने के वास्ते किया था। लूथर की हार्दिक इच्छा थी कि बाइबिल का उल्था जर्मन भाषा में हो परन्तु अपने शत्रुओं द्वारा लिखी पुस्तकों आदि का उत्तर देने में वह ऐसा फंसा था कि उसे इस बहुमूल्य कार्य के करने का समय ही नहीं मिलता था। जब हम यह सोचते हैं कि लूथर की सारी धार्मिक शिक्षा तथा उपदेश की जड़ बाइबिल थी और वह पोप के विरुद्ध होने का सब से बड़ा कारण यह बताता था कि मैं बाइबिल की शिक्षा को पोप की शिक्षा के विरुद्ध पाता हूं, तब हमें स्पष्ट पता लग जाता है कि लूथर जर्मन भाषा की बाइबिल जर्मन सर्वसाधारण के हाथों में रखने को कितना उत्सुक होगा। यही नहीं लूथर इस बात का सदा विरोध करता था कि जितने धार्मिक कृत्य होते हैं सब लटिन भाषा में होते हैं जब कि लेटिन भाषा को कुछ इने गिने पादड़ियों को छोड़ और कोई नहीं जानता सर्वसाधारण जिस भाषा को समझें उस ही भाषा में सब धार्मिक कृत्य हों लूथर इस बात का बड़ा पक्षपाती था। लूथर इस बात से बड़ी घृणा करता था कि तोते की भांति लोग लेटिन भाषा की प्रार्थनायें गिरजों में पढ़ा करते हैं जब कि उनकी समझ में उनका एक अक्षर भी नहीं आते। लूथर नहीं समझ पाता था कि जिस भाषा का जो समझ नहीं सकता उस भाषा में की हुई प्रार्थना भी क्या ईश्वर प्रार्थना है। अतः इन सब कारणों से बाइबिल का

भाषा में उलथा करना लूथर ने अपने जीवन का एक बहुत बड़ा उद्देश्य मान लिया था। वार्टवर्ग के बंदीखाने में उसे अवकाश मिला और उसने बाइबिल का जर्मन अनुवाद कर डाला।

लूथर ने कई कारणों से अधिक दिनों तक अज्ञातवास करना उचित न समझा और ६ मार्च सन् १५२२ को वह विटेन्बर्ग के सर्व साधारण में आकर उपस्थित होगया। इस भांति अज्ञातवास त्यागने की सूचना लूथर ने सैक्सनी के राजा को भी न दी थी परन्तु विटेन्बर्ग पहुंच कर लूथर ने एक पत्र फ्रेडरिक को लिख भेजा कि कहीं वह अप्रसन्न न होजाय।

एकादशवाँ परिच्छेद

लूथर के तत्कालीन मनमाने शिष्य और प्रतिद्वंदी

लूथर पोप का घोर विरोधी था परन्तु राजद्रोही न था।
रर अलिद्वारा सपादित धार्मिक सुधार का वडा विरोधी
। लूथर कृत पोपद्रोह धीरे २ यूरुप के अनेक देशों में फैल
ग। सारा यूरुप पोप के अत्याचारों से दु:खी था वहुत से
ग पोप से अपना नाता तोडना चाहते थे। लूथर और
र्मनी को पोप के विरुद्ध होते देख यूरुप की अन्यदेशीय
नता भी पोप विरोध के लिये तत्पर होगई। यद्यपि सारा
रुप इस समय पोप विरोध में तत्पर था परन्तु इससे यह
समझना चाहिये कि सारा यूरुप लूथर का शिष्य था अथवा
रर की आज्ञा मानता था। अन्य देशों में अन्य धार्मिक नेता
जिनका लूथर से वडा मतभेद था और यदि कुछ सामा
ता थी तो यही कि ये सब लूथर सदृश पोप विरोधी थे
र धार्मिक सुधार चाहते थे।

लूथर की वर्म्स राजसभा की विजय अद्वितीय थी। यद्यपि
तेहास में ऐसे अनेक उदाहरण हैं कि, लोगों ने अपने प्राण
देये परन्तु अपना धर्म न छोडा तव भी लूथर की ऐसों से
नता नहीं की जासकती। प्राण दे देना एक बात है और मुख

सम्मुख एक निस्सहाय कृषक पुत्र का समस्त राजसभा में निर्भीक खडे हो उस सभा का विरोध करना दूसरी बात है। लूथर ने ऐसा ही कर दिखाया। ऐसी अद्वितीय आत्मिक शक्ति और धार्मिक क्षमता रखनेवाले पुरुष के अचानक गुप्त हो जाने से जर्मनी में बडी गडबडी मचगई। सारा जर्मनी असि बल से धार्मिक सुधार, और पोप धर्म-नाशार्थ प्रस्तुत था परन्तु नायक की कही खबर न थी। इन नवीन धार्मिक आत ताइयो में इतनी सहिष्णुता कहाँ कि ये समय की अपेक्षा करें? इन्होंने जिसे पाया उसही को अपना नायक बना पोप की जड काटना आरम्भ कर दिया। इन धार्मिक सुधारकों ने भी कुछ कम अत्याचार न किये। अत्याचार तथा असिबल द्वारा धार्मिक सुधार करना लूथरको अभीष्ट न था। ऐसे मनमाने नायकों की नायकता में धार्मिक सुधार होते देख लूथर को अज्ञातवास छोडना पडा। दूसरे लूथर को अपना अज्ञातवास त्यागने के कारण प्राण जाने का तनिक भय न रह गया था। जर्मन सम्राट अपने शत्रुओं से युद्ध करने में व्यग्र था। तुर्क सारा हॅगरी हड़प कर हाप्सना लेन का उद्योग कर रहे थे। पोप सदा की भांति चार्ल्स की बढती शक्ति को घटाने का उद्योग कर रहा था। फ्रास पीछे से आक्रमण करने के लिये सदा प्रस्तुत रहता था। ऐसी घटना चक्रों में फॅस होने के कारण जर्मन सम्राट लूथर का कुछ न बिगाड सकते थे। अत. लूथर के लिये अज्ञातवास में छिपे रहने का कोई कारण न था, फिर जब कि उसके मनमाने शिष्य उसके नाम पर मनमाने धर्म चला रहे थे।

लूथर का पुराना शिष्य कार्लस्टैड लूथर के गुप्त होते ही

मन माने धार्मिक सुधार करने लगा। उसने सैक्सनी के बहुत से लोगों को एकत्रित कर गिर्जों में लूटमार मचाना प्रारम्भ कर दिया—मूर्तियाँ तोड़ डालीं, मास कहना बन्द करा दिया और अनेकों कार्य ऐसे किये जो लूथर को बहुत बुरे मालूम पड़े। जब डाक्टर स्टापिज ने लूथर का पत्र दिखा उसे ऐसा करने से रोका तो उसने हंसकर कह दिया "मनुष्य की आज्ञा मानने से ईश्वर की आज्ञा मानना कहीं अधिक उचित है"। इस पर स्टापिज ने उससे कहा कि उसके इस प्रकार गिरजाओं तथा मूर्तियों के तोड़ने से लूथर को बड़ा कष्ट होता है। उसने उत्तर दिया कि ये कोई नवीन बात तो है नहीं कि ईश्वर की आज्ञा पालनवश संसार को कुछ कष्ट उठाना पड़े। इन सब बातों का लूथर को पता लगा और उसमें और उसके पुराने शिष्य कार्लस्टैड में घोर शत्रुता होगई।

इसी प्रकार ज्विंगोल और कालविन ने स्विटजरलैंड के ज्यूरिक और जेनेवा नगर में पोप के विरुद्ध अस्त्र उठाये। इन दोनों में और लूथर में मित्रता का भाव न था कारण कि यद्यपि ये सब पोप के शत्रु और नवीन सुधरे हुये धर्म के पक्षपाती थे परन्तु कोई भी किसी का शिष्य न था और सब अपने २ स्वतन्त्र विचार रखते थे। ऐसी अवस्था में यह बहुत सम्भव है कि कुछ बातें एक दूसरे की न मिलें और धार्मिक मतभेद शीघ्र शत्रुता में बदल जाय। इन सब से कहीं अधिक भयंकर शिष्य था अल्सटड का पादड़ी मन्जर। इसने कहा केवल धार्मिक सुधार से काम न चलेगा केवल पोप ही दोषी नहीं है बड़े २ जमीन्दार तथा सामन्तों में सुख लिप्सा बढ़ गई है। मारे कर भार के कृषक जनता रसातल को चली जारही है। महन्तों

में जितनी ही सुखसामग्री बढ़ रही है कृषकों में उतनी ही दरिद्रता बढ़ती जाती है। इसने कहा लूथर ने केवल धार्मिक सुधार का उपदेश दिया है सो ठीक किया परन्तु इतने से काम न चलेगा हमको आर्थिक सुधार भी करना होगा। इसने उपदेश देना प्रारम्भ किया कि ईश्वर ने उसे आदेश दिया है कि वह इस संसार के शत्रुओं तथा पीड़कों को मार कर धर्मराज स्थापित करे, जिस धर्मराज में सब भ्रातृवत् रहेंगे, न कोई दरिद्र रहेगा न कोई धनी। इस धार्मिक आततायी ने एक "प्रभु ईशु की सैन्य" भी एकत्रित करली और अपने मन माने विचारों के अनुसार कार्य करने लगा। नगर ग्राम उजाड़ डालता था। बहुत से मनुष्यों को "प्रभु ईशु का शत्रु" कहकर इसने वध कर डाला। अनाबपटिस्ट नामक एक और 'धार्मिक' आततायियों का झुंड था जिनके अत्याचार पूर्ण कृत्यों के वर्णन करने का न अवसर है न रुचि। यह अत्याचार धर्म के सुधार के नाम पर किया जा रहा था। लूथर इन आततायी धर्म 'सुधारकों' का वैसा ही घोर विरोधी था जैसा पोप का। लूथर ने जर्मनी के सामन्त कुलों से आग्रह करना प्रारम्भ किया कि आप अपना बलसमह कर जर्मनी को इन धार्मिक आततायियों से बचावें।

पोपलियो का देहान्त होगया और उसके स्थान पर एड्रियन षष्ठ पाप हुआ। यह बहुत शीघ्र मर गया और इसके उपरान्त क्लिमेन्ट सप्तम पोप हुआ। ये सब पोप यूरुप की धार्मिक उद्दंडता से घबड़ा २ कर जर्मनी के सम्राट को लूथर के प्रति धर्म्म की सभा द्वारा निर्धारित दंड को कार्य में परिणित करने के लिये उत्साहित और उत्तेजित करते थे परन्तु सम्राट अपने शत्रुओं से निपटने में ऐसा व्यग्र था कि उसे लूथर के विरुद्ध

हाथ उठाने का अवसर ही न मिलता था। चार्ल्स अच्छी तरह जानता था कि लूथर को दण्ड देने के लिये उसे तीन भाग जर्मनी से युद्ध करना पड़ेगा। परन्तु वह पुराने धर्म का कट्टर पक्षपाती भी था और यह उसकी आन्तरिक इच्छा थी कि सारा जर्मनी पूर्ववत् फिर धर्म विषय में एक हो जाय।

लूथर की अपील सुन लूथर के पक्ष के राजाओं ने जिनमें सैक्सनी का राजा जान फ्रेडरिक (क्योंकि बुद्धिमान फ्रेडरिक मर चुका था और उसका भाई उसके स्थान पर राजा था) हेस का फिलिप, मेसबिक का ड्यूक और मेन्सफील्ड ने काउंट इत्यादि अपनी २ सैन्य एकत्रित कर मन्जर और अनाबप्टिस्टों आदि धार्मिक आततायों का अंत करना निश्चित कर लिया। कृषक लोग हार खाकर इधर उधर भाग गये, मन्जर पकड़ कर फांसी पर चढ़ा दिया गया।

राजाओं और सामन्तों ने लूथर के कथनानुसार घोर अत्याचार करके विद्रोह शान्त कर दिया अनेक इतिहास कारोंने इन अत्याचारों के पाप का भार अब भी लूथर के माथे मढ़ा है। इन लोगों ने अभी कृषकों का दमन किया ही था कि इन्हें सन्देह होने लगा कि जर्मन सम्राट को बहुत शीघ्र लूथर के पक्षपातियों को सताने के लिये अवकाश मिलनेवाला है। ये सब यह निश्चय जानते थे कि जब तक सम्राट अपने शत्रुओं से घिरा है तब ही तक हम लोग (लूथर के पक्षपाती), सुख की नींद सो रहे हैं। जिस दिन जर्मन सम्राट अपने बाहरी शत्रुओं से निश्चिन्त हुआ उसही दिन हम लोगों को दो में से एक काम करना पड़ेगा। या तो पुन. पोप धर्म स्वीकार करें या अपने धर्म की रक्षा के लिये शस्त्र उठावें

पोप का धर्म स्वीकार करना किसी को भी अभीष्ट न था अतः सब लोगों ने जो पोप के विरोधी थे एक मित्रसंघ स्थापित किया। इस सघ का उद्देश्य यही था कि यदि कोई शक्ति बल पूर्वक हम अपना धार्मिक विश्वास त्यागने पर विवश करेगी तो हम अपनी रक्षा अपने शस्त्र द्वारा करेंगे।

फरासीसियो की पैविया में हार हुई और उनका सम्राट फ्रेंसिस बन्दी हो गया। इस समय ऐसा मालूम होने लगा कि मानो सारा यूरुप जर्मन सम्राट के करतल में है। परन्तु फ्रैंसिस बहुत शीघ्र स्वतत्रता पा गया और पोप से मित्रता कर फिर चार्ल्स से लडन की तैयारी करने लगा। चार्ल्स ने इस मित्रता से रुष्ट हो रोम पर आक्रमण किया। लूथर का काम चार्ल्स स्वय कर रहा था। यह सब झगडा १५३० तक चलता रहा। १५३० में चार्ल्स और फ्रास तथा पोप में सधि हो गई। तुर्क लोग भी व्हायना के द्वार से कडी हार खाकर लौट गये। चार्ल्स अपने घर के शत्रुओं का सामना करने के योग्य हुआ।

चार्ल्स इधर स्वस्थ हुआ उधर उसने लूथर के पक्षपातियो को अपने धर्म त्यागने के लिये विवश करना प्रारम्भ किया। ये सब पूर्व ही से तय्यार थे। इस युद्ध के कुछ पूर्व ही लूथर का देहान्त हो चुका था–अत इस युद्ध की घटनाओं के वर्णन और लूथर की जीवनी से कोई विशेष सम्बन्ध नहीं है। इस सधि में अन्य राजनैतिक बातों के साथ २ धार्मिक प्रतिज्ञा यह थी कि पोप, लूथर और कालविन के अनुयायी समान दृष्टि से देखे जायगे और कोई भेदभाव न किया जायगा। इस युद्ध में जर्मनी की बडी हानि हुई।

द्वादश परिच्छेद

लूथर का विवाह और गृहस्थी

धर्म्म की सभा के दरबार के उपरान्त बहुत दिनों तक लूथर को दरिद्रता से बड़ा कष्ट उठाना पड़ा। विटेन्बर्ग के आगस्टाइन मठ में अब भी लूथर रहते थे परन्तु वहाँ न अब कोई महन्तही रहे गये थे न कुछ आय ही थी। लूथर की निज की भी आय कोई नहीं थी। एक जोड़ी कपड़े से लूथर को दो वर्ष काटने पड़े। दो वर्षों के उपरान्त इलेक्टर से थोड़ा सा कपड़ा नये वस्त्रों के लिये मिला। पुस्तक बेचनेवाले उसकी पुस्तकें बेच २ कर धनी हो रहे थे परन्तु लूथर को उनसे एक कौड़ी न मिलती थी।

अब हम लूथर के ही मुख से उसकी दरिद्रता की दशा का वर्णन करते हैं —"स्टाफिज़ ने हमारा रुपया अभी तक नहीं भेजा है और मैं दिन प्रति दिन अधिक ऋणी होता जाता हूँ। मेरी समझ में नहीं आता कि मैं क्या करूं। इलेक्टर से फिर मांगूं या जैसे दिन इस तरह चले, चलाकर देखूं और अधिक से अधिक कष्ट उठाता जाऊं। परन्तु अंत में नितान्त कष्ट और भूख से, ऐसा मुझे विदित होता है, एक दिन मुझे विटेन्बर्ग त्यागना पड़ेगा और पोप और सम्राट से सन्धि करनी पड़ेगी। (नवम्बर १५२३) । "मैं दिन प्रति दिन अधिक २ ऋणी होता जाता हूँ, मुझे एक दिन गली २ भिक्षा मांगनी

पड़ेगी" (२४ अप्रैल १५२४)। "ऐसी अवस्था अधिक दिन तक नहीं चल सकती। राजा की देरी निश्चय मेरे हृदय में बड़ी शङ्कायें पैदा करती हैं। मैंने तो बहुत दिन पूर्व ही यह मठ त्याग दिया होता और अन्यत्र जाकर अपने हाथों के परिश्रम से जीता (यद्यपि ईश्वर जानता है मैं यहां भी कुछ कमपरिश्रम नहीं करता) यदि मुझे ऐसा करने से यह भय न होता कि इस भांति मेरे राजा के धार्मिक सिद्धान्तों पर धब्बा लगेगा।"

"तुम मुझ से आठ रुपये मागते हो। भला बताओ तो मैं कहाँ से लाकर तुम्हें आठ रुपये दू। जैसा कि तुम्हें विदित है मैं बहुतही मितव्ययता से रहता हू तब भी मेरा खर्चा नहीं चलता।

धीरे२ करके मे लगभग सौ रुपये का ऋणी होगया हू जो मुझे किसी न किसी प्रकार चुकाना होगा। मुझे तीन प्याले पचास रुपयो के लिये गिरमी रखने पड़े हैं और एक तो १२ रुपये के लिये बेचही डालना पड़ा। निकलस इन्डे सेस से कहो कि आदमी भेजकर मेरी लिखी कुछ पुस्तकें मगा लेवें। अपने (पुस्तक) प्रकाशकों के ऊपर इसका मैंने कुछ आर्थिक अधिकार रख छोड़ा है। करू क्या यद्यपि मैं इतना दरिद्र हू तब भी ये (प्रकाशक) मेरे परिश्रम के लिये मुझे एक कौड़ी नहीं देते। यदि बहुत किया तो मेरे ग्रंथ की मुझे एक दो प्रतियां भेज देते हैं। ये भी क्या कुछ देना हुआ, जब कि दूसरे प्रथकार यहाँ तक कि केवल उल्था करने वाले भी एक रुपया पन्ना पाते हैं।" (५ जुलाई १५२७)

"मेरे प्यारे मत्री! कौन ऐसी बात होगई है कि आप ऐसा घुड़क कर और धमकाते हुए लिखते हैं। मैं पूछता हू

कि क्या यह बाइबिल से प्रेम करना है, कि आप उसही बाइबिल पूजक को पेट भर अन्न देने से भी मुख मोड़ते हैं। मैं फिर कहता हूं कि यह घोर अन्याय है, बड़ी विगर्हित तुच्छता है कि अकेले में तो मुझे चले जाने के लिये आज्ञा दी जाती है और सब के सामने ऐसा भाव दिखाया जाता है मानों ऐसी आज्ञा कभी दी ही नहीं गई थी। क्या आप यह समझते हैं कि आप की ये चालें परमात्मा भी न देख पावेगा। मुझे पूरी आशा है कि यदि आप भोजन न देंगे तो ईश्वर दे होगा। " (२७ नवंबर १५२४)।

परन्तु धीरे२ लूथर की आर्थिक अवस्था कुछ सुधरने लगी। सैक्सनी के राजा ने अपने विश्वविद्यालय का पुनः सुधार किया और लूथर को लगभग ५०० रुपया वार्षिक वृत्ति की एक जगह देदी। इसही बीच में सैक्सनी की अवस्था सुधरने लगी और लोग लूथर को उपहारादि भेजने लगे। विटेम्वर्ग में केथराइन हान वोरा नामक एक स्त्री रहती थी। यह उच्चकुल की थी परन्तु उसके मा बाप निर्धन थे। जब केथराइन नव वर्ष की थी तब ही उसके मा बाप ने दरिद्रता वश उसे एक मठ को दे दिया था। १६ वर्ष की होने पर उसे साधु होने की शपथ खानी पड़ी। यद्यपि भाग्य चक्र में फसकर उसे साधु होना पड़ा परन्तु, वह इस साधु जीवन से बड़ी घृणा करती थी। जब लूथर की शिक्षा के प्रभाव से साधुगण पुनः गृहस्थ होने लगे और मठ टूटने लगे तो केथराइन ने भी अपने मित्रों को लिखा कि मुझे इस अवस्था से निकाल लो। मित्रों ने उसकी इस प्रार्थना पर बिलकुल ध्यान नहीं दिया। १५२३ के अपरैल मास में वह अन्य नौ मनुष्यों के साथ अपने मठ से भाग निकली।

इसके उपरान्त ये सब के सब भूखों मरने लगे। लूथर ने दयावश इन लोगों के लिये चंदा कराया। धीरे २ करके लूथर और केथराइन* में प्रेम हो गया। केथराइन उस समय चौबीस वर्ष की थी और बहुत कुछ सुन्दर भी थी। अन्त में १३ जून सन १५२५ को इन दोनों स्त्री पुरुषों का एक निकटस्थ ग्राम गिरजे में विवाह होगया।

इस विवाह के विषय में बड़ा आन्दोलन मचा। कुछ लोगों ने लूथर की बड़ी निन्दा करना प्रारंभ किया। लूथर का मित्र मिलंकथन कहने लगा कि बस अब लूथर बिगड़ गया। लूथर स्वयं घबड़ा गया और लिखता है "इस विवाह ने मुझे ऐसा घृणा का पात्र बना दिया है "। बहुत लोगों का यह विचार था कि ऐसे समय में जब कि सारा जर्मनी घराऊ युद्ध के भय से विहल था और वह भी लूथर द्वारा प्रचारित धर्म के लिये, लूथर का इस प्रकार अचानक और बाध विवाह करना बहुत अनुचित था। कुछ लोग कहते थे कि ४२ वर्ष के पुरुष के लिये २० वर्ष की युवती के संग विवाह करना सर्वथा अयोग्य था। लूथर स्वयं स्वीकार करता है कि वह केथराइन को बहुत चाहता था और उसे "मेरी केट" कहा करता था। इन सब प्रेम सम्बोधनों को सुन लोगों ने मनमानी अफवाह फैलाना

१ ऐसा मालूम होता है कि इसके पूर्व केथराइन नूरेम्बर्ग में एक नवयुवक विद्यार्थी जीरोम बामगार्टनर से प्रेम करती थी क्योंकि लूथर उसे १२ अक्टूबर १५२४ इसवी को यों लिखता है "यदि तुम्हें अपनी केथराइन पाने की इच्छा है तो तुरन्त चले आवो। नहीं तो वह किसी अन्य की संपत्ति हो जायगी। यह अभी तक तुम्हें भूली नहीं है। हमें बड़ा आनंद होगा यदि आपका विवाह केथराइन के साथ होजाय क्योंकि आपका अधिकार पूर्व का है।"

प्रारम्भ किया। लूथर लिखता है" मैंने अचानक विवाह कर लिया कि मुझे लोगों की मनमानी बातें न सुननी पड़ें और उन लोगों का मुख भी बन्द होजाय जो मुझे पूर्व ही से भला बुरा कहने लग गये हैं।"

मैंने पूर्व के प्रकरण में यह दिखाया है कि लूथर साधु होने और विशेष कर आजन्म ब्रह्मचारी रहने की प्रथा के बहुत ही विरुद्ध था कारण कि उसे निज का अनुभव था कि ऐसे अप्राकृतिक प्रण लोग,करने को तो कर बैठते हैं परन्तु निबाह नहीं पाते, अतः मठों में घोर व्यभिचार फैलता है। लूथर के विचारानुसार विवाह एक ईश्वर सम्मत धर्म शास्त्र विहित अत्यन्त पवित्र संस्कार है जो प्रत्येक मनुष्य को स्वीकार करना चाहिये। बहुत से लोग जो लूथर को यह उपदेश देते सुनते थे कि साधू पुनः गृहस्थ हो सकता है और विवाह कर सकता है तथा विवाह बाइबिल विहित है लूथर को स्वयं विवाह करने को विवश करते थे और कहते थे कि आपको स्वयं आदर्श बनना चाहिये। इसके अतिरिक्त लूथर उदार और सच्चे हृदय से स्वीकार करता है कि उसके भी मनुष्य स्वभावोचित सब ही इच्छायें थीं "ईश्वर की शपथ मैं यह कभी नहीं कहता कि रुधिर मांस का मुझ पर कुछ प्रभाव ही नहीं है और मैं ईंटा पत्थर हूं परन्तु तब भी मुझे अभी विवाह करने की इच्छा नहीं है क्योंकि प्रति दिन मुझे यह भय लगा रहता है कि जाने कब मैं नास्तिकवत् चिता पर चढ़ा कर यमालय भेजदिया जाऊं"। लूथर आगे चल कर लिखता है "मुझे अब कुछ अधिक दिन जीवित रहने की आशा बंध गई है अतः अब मैं अपने पिता की इस चिरसंचित इच्छा को कि अब मैं विवाह

फर कुल चलाऊ नहीं रोक सकता । इसके अतिरिक्त मेरी इच्छा है कि मै अपने उपदेशों का स्वयं आदर्श बन सकूं इस विषय में ईश्वर की ऐसी ही इच्छा है । मेरा अपनी पत्नी के प्रति कोई व्यभिचार या कामुकता भाव नहीं है। हाँ मैं उससे निरपेक्ष प्रेम अवश्य करता हू ।

यदि लूथर का विवाह इन सब अपवादों के कारण कुछ कष्टप्रद होगया था तो लूथर को इन सब कष्टों का प्रतिफल बहुत शीघ्र अपनी नववधू के सद्गुणों में मिल गया। लूथर लिखता है कि मेरी पत्नी मेरी आशा के बाहर आज्ञानुकारिणी है। सदा मेरी इच्छानुकूल कार्य कर मुझे प्रसन्न रखती है। एकबार लूथर ने कहा "मैं अपनी पत्नी को फ्रांस के राज्य अथवा वेनिस के धन सम्पत्ति के लिये भी न बदलू गा और वो भी तीन कारणों वश-प्रथम, मुझे ईश्वर ने इसे ऐसे समय में दिया है जिस समय में ईश्वर से एक स्त्री के लिये प्रार्थना कर रहा था, दूसरे, यद्यपि उसमें अवगुण हैं परन्तु और स्त्रियों से कहीं कम हैं, तीसरे, कि वह अपने सतीत्व की सच्ची है"।

लूथर कहा करता था कि "बाइबिल से उतर कर यदि इस संसार में कोई दूसरी निधि है तो वह है पवित्र विवाह सम्बन्ध। पवित्र, प्रसन्नवदना, ईश्वर भक्त, गृहकार्यकुशला पत्नी,* जिसे तुम विश्वास पूर्वक अपना तन, मन, धन सौंप

* अद्वैतं सुखदुःखयोरनुगतं सर्वास्ववस्थासु यत् ।
विश्रामो हृदयस्य यत्र जरसा यस्मिन्नहार्यो रस ॥
कालेनावरणात्ययात्परिणते यत् प्रेमसारेस्थितम् ।
भद्रं प्रेम सुमानुषस्य कथमप्येकं हि तत् प्राप्यते ॥

—भवभूति

सको। ईश्वर के सब उपहारों में श्रेष्ठ है। ऐसे भी स्त्री पुरुष हैं जो न अपनी सन्तति का ध्यान रखते हैं न परस्पर प्रेम करते हैं, ऐसे लोग मनुष्य नहीं कहे जा सकते। वे अपना घर नरक बना लेते हैं।"

विवाह के समय तो लूथर अकिञ्चन था परन्तु शीघ्रही जैसा पहिले बताया गया है उसे रोटी दाल का ठिकाना हो गया। लूथर का छोटा मोटा गृह एल्ब नदी के किनारे बना हुआ था। यह यद्यपि बहुत बड़ा न था परन्तु तब भी सुन्दर और हवादार था। धीरे २ करके लूथर ने एक खेत और गृह क्रय करलिया। लूथर की मृत्योपरान्त इसही गृह में उसकी पत्नी जाकर रही थी। केथराइन सब काम करने में बड़ी चतुर थी। वह खेत का काम करती, सुअर और मुर्गियों को पालती, शराब बनाती, अपने निकटस्थ मछली पकड़ने वाले तालाब से मछली पकड़ लाती—सदोप में गृहस्थी के सब कार्य बड़ी चतुरता और उत्साह से करती थी। घर को साफ सुथरा रखना वह अपना मुख्य कर्तव्य मानती थी।

लूथर का कुटुम्ब एक प्रकार से बड़ा था। लूथर के सब मिलाकर पांच लड़की लड़के हुए। इनमें तीन लड़के और दो लड़कियाँ थी। हेंस, एलिजबेथ मेगडलेन मार्टिन और पाल उनके नाम थे। केथराइन की चाची जो केथराइन के ही मठ में रहती थी और केथराइन के साथही चली आई थी लूथरही के साथ रहती थी। लूथर इस स्त्री का बड़ा सम्मान करता था। इसके अतिरिक्त दो भतीजियां और थीं जो लूथर के साथ रहती थीं, कुछ विद्यार्थी भी लूथर के साथ रहते थे। अपने लड़के लड़कियों से लूथर को बड़ा प्रेम था। लूथर अपनी

संतति को प्रसन्न रखने तथा यथाशक्ति उनकी सरल इच्छाओं को पूर्ण करने का बड़ा उद्योग करता था। लूथर ने कोवर्ग से अपने ज्येष्ठ पुत्र हैंस को निम्नलिखित वत्सलतापूर्ण पत्र लिखा था। "मेरे छोटे प्यारे पुत्र ईशु की जय। मैं यह देखकर बहुत प्रसन्न हूं कि तुम अपना पाठ खूब पढ़ते हो और ईश्वर की प्रार्थना करना भी नहीं भूलते हो। इसी तरह कार्य करते रहो। मेरे प्यारे बेटे! जब मैं घर लौटूंगा तो तुम्हारे लिये बहुत अच्छा खिलौना लाऊंगा। मैं एक सुन्दर उपवन जानता हूं जहां बहुत से प्रसन्न चित्त लड़के सच्चे काम के कुरते पहिने अच्छी २ नारंगी बेर आदि तोड़ा करते हैं। नाचते हैं गाते हैं और सुन्दर घोड़ों पर सुनहली लगाम और चांदी की जीन सहित बैठते हैं। मैंने माली से पूछा किसका उपवन है किसके लड़के हैं। माली ने उत्तर दिया "ये वे लड़के हैं जो पढ़ते हैं प्रार्थना करते हैं और सिधाई से रहते हैं"। तब मैंने उत्तर दिया "मेरे भी एक लड़का है उसका नाम हैंस लूथर है क्या वो भी इस उपवन में आकर नारंगी तोड़ सकता है, घोड़े पर चढ़ सकता है और सब के साथ खेल सकता है। तब उसने कहा "हां, यदि वह अपना पाठ पढ़ता हो, प्रार्थना करता हो और अच्छा लड़का हो तो आ सकता है" तब उसने मुझे एक स्थान दिखाया जो नाचने के लिये बहुत चिकना बनाया गया था और जहां खेलने को तीर धनुष रक्खे थे। मैंने कहा मैं अभी जाकर अपने लड़के को लिखता हूं। उसने कहा "हॉ" "हॉ" "जाकर अभी लिखो"। अतः मेरे प्यारे, बेटे मन लगाकर पढ़ा करो और

प्रार्थना किया करो। जियस* और जोस्टसे भी यही करने को कहो। तब तुम सब के सब इस सुंदर उपवन को आ सकोगे। सर्वशक्तिमान ईश्वर तुम्हारी रक्षा करे। तुम्हारा प्रेमी पिता मार्टिन लूथर।

लूथर बैठा था और उसके सामने उसका छोटा मार्टिन तन, मन, धन से गुड़िया को कपड़ा पहिनाने में व्यग्र था। लूथर कहने लगा "स्वर्ग में हम लोग भी ऐसे ही सीधे सादे होंगे जैसे कि यह छोटा बच्चा। देखो ईश्वर के विषय में यह कैसा बातचीत करता है और तनिक भी सन्देह नहीं करता। माना खेल ही बच्चों का सर्वोत्कृष्ट भोजन है। सच तो यों है कि ये स्वयं सर्वोत्तम खिलौना हैं। वे (बच्चे) जो कुछ भी करते या कहते हैं उसमें एक हार्दिक सचाई मिली रहती है।

यद्यपि उनकी बुद्धि छोटी रहती है परन्तु धार्मिक विश्वास अधिक होता है। ये लोग हम ऐसे मूर्ख वृद्धों से कहीं अच्छे होते हैं। अब्राहम की बड़ी बुरी दशा हुई होगी जब उसे आइसक को मारने की आज्ञा मिली थी। यदि ईश्वर ने मुझे ऐसी आज्ञा दी होती तो मैं निश्चय उससे झगड़ पड़ा होता। इतना सुनते ही केथराइन (जिसे लूथर सदा केट या केटी कहा करता था) तुरन्त बोल उठी "मैं सात जन्म न विश्वास करूंगी कि ईश्वर किसी को अपने पुत्र की हत्या करने की आज्ञा देता है"। लूथर ने उत्तर दिया "प्रभु ईशु से बढ़कर ईश्वर का कोई प्यारा नहीं है। पर उसे भी उसने फांसी चढ़ने दिया"।

* हैंस के बाल मित्रों के नाम हैं

इस प्रकार के आनंद में इस सुखी कुल का जीवन व्यतीत होता था। लूथर को अपनी 'केट' को चिढ़ाने रिझाने और मनमाने तथा नित्य नवीन नाम रखने में बड़ी प्रसन्नता होती थी। लूथर ने कभी अपनी केट को गुस्सा होकर कुछ नहीं कहा लूथर उसके सद्गुणों का अच्छा परीक्षक था और उसका पूरा सम्मान करता था। एकबार लूथर ने कहा "केट यदि तुम सारी बाइबिल पढ़ जावो तो मैं तुम्हें पचास सुवर्ण मुद्रायें पारितोषिक दूँ"। ग्रंथकार को यह पता नहीं है कि इसपारितोषिक के लालच में केट फसी थी या नहीं।

'कस्यात्यन्तं सुखमुपनत दुःखमेकान्ततो वा। नीचैर्गच्छत्युपरि च दशा चक्रनेमिक्रमेण' के कथनानुसार लूथर के गार्हस्थ्य सुख के आकाश में भी कालिमा के बादल दिखाई पड़ने लगे। हँस बहुत छोटी अवस्था में मर गया। इसके उपरान्त उसकी पहिली लड़की एलिजबेथ भी बहुत छोटी अवस्था में मर गई। लूथर कहता है "आश्चर्य्य है। इस लड़की के मरने से मेरा हृदय इतना सुस्त हो गया। तबसे मेरा हृदय ऐसा थर्राया करता है कि मैं स्त्री तुल्य हो गया हूं। मैं कभी स्वप्नमें भी न सोच सकता था कि मनुष्य का हृदय अपनी संतति के लिये इतना प्रेममय हो सकता है"। इसके उपरान्त उस की सब से प्यारी लड़की मैगडलेन भी १४ वर्ष की अवस्था में मर गई। लूथर को इससे बहुत कुछ आशा थी। उसके मरने से लूथर का हृदय टूट गया। जब उसका शव समाधि में गाड़ने को ले जाया जा रहा था तब लूथर ने उठानेवाले व्यक्तियों से कहा "मैंने एक देवता स्वर्ग भेज दिया है। यदि उसके सदृश मेरी भी मृत्यु हो सके तो मैं अभी मरने को

तय्यार हूं" । लूथर ने अपने मित्र को लिखा कि "प्राकृतिक प्रेम इतना शक्तिमान है कि मैं उसकी (मैगडेलन) मृत्यु बिना हार्दिक घोर पीड़ा के नहीं सह पाता । जब मुझे उसके शब्द और हावभावों की याद आती है तब ईशु की मरण स्मृति भी मेरे दुःख को नहीं घटा पाती*" ।

---

* इसकी समाधि पर लूथर ने निम्न लिखित पद्य स्वयं बनाकर खुद गाया था । उसका अंगरेज़ी उल्था इस प्रकार है ।

Here do I Lena Luther's daughter rest
Sleep in my little bed with all the blest
In sin and trespass was I born
For ever was I thus forlorn
But yet I live and all is good
Thou Christ, redeemest me with thy blood.

त्रयोदश परिच्छेद

लूथर की मृत्यु

१५३७ की फरवरी में मालकाल्ड में युद्ध के सबंध में एक धर्म सबंधी सभा की गई। लूथर भी यहां उपस्थित हुआ। परतु यहां आने पर उसे बडा भयकर रोग हो गया। अश्मरी या मूत्रकृच्छ्र रोग हो जाने के कारण एकादश दिवसों तक लूथर मूत्र त्याग न कर सके। यद्यपि ऐसी भयकर अवस्था थी कि जीवन से उनके मित्र निराश हो चुके थे परतु लूथर ने अपनी यात्रा न तोडी। फल भी अच्छा ही हुआ और चलने के कारण लूथर रोग मुक्त हो गये। इसी प्रकार एकबार लूथर के हृदय के निकट कुछ रुधिर के जम जाने से भी लूथर को बडा कष्ट उठाना पडा था। लूथर कान और दात की पीडा से बहुत हैरान रहते थे।

इस ही साल रोम ने यह देखा कि प्रोटेस्टेंट असिबल से नहीं दबाये जा सकते, पुन सामनीति का आश्रय लिया। इस समय पोप था पापल तृतीय। यह पोप कुछ अच्छे स्वभाव का भी था। इसने कहा कि लूथर की बहुत सी बातें सत्य हैं, अत हम लोग लूथर की उन सब बातों को मानने तथा अपना सुधार करने को प्रस्तुत हैं। उसने सभा का स्थान भी निश्चित किया जहा उभय पक्ष मिलकर परस्पर समझौता कर सकते थे। लूथर उनकी इन चालों में कब फसनेवाले थे। लूथर ने कई पुस्तकें पोप की धूर्तता प्रकट करने के लिये लिखी।

उनका इस का फल यह हुआ कि पोप की चाल न चली। इसही भांति पोप पक्ष से युद्ध करते करते लूथर की जीवन अवधि समाप्त हो चली और १५४६ का वर्ष आ उपस्थित हुआ।

मैंसफील्ड के सामन्त कुल में परस्पर बटवारे के विषय में कुछ झगडा खडा हुआ। उन लोगों ने लूथर को निमन्त्रण दिया कि लूथर आकर सीमा का विवाद निश्चित करदें यद्यपि लूथर को इन विषयों का बहुत कम ज्ञान था परन्तु तब भी उन्हें ईसलीबन जाना पडा। अतः विटेन्बर्ग में १७ जनवरी को अपना अंतिम उपदेश दे लूथरने २३ जनवरी को अपनी जन्मभूमि के लिये प्रस्थान किया। लूथर के साथ उनके मित्र जोनाः और उनके दो पुत्र थे। मैंसफील्ड की सीमा पर इन्हें शत अश्वारोही मिले जो इनकी अगवानी के लिये भेजे गये थे। इस प्रकार लूथर बडे सम्मान सहित अपनी जन्मभूमि पहुंचे। परन्तु, मार्ग ही से उनका स्वास्थ्य बिगड चला था और ईसलीबन पहुंचने पहुंचते उनकी शारीरिक अवस्था बहुत बिगड गई। लूथर को विश्वास होगया कि मेरा समय अब आगया है अब उन्हें घर लौटने की इच्छा होन लगी। परन्तु ईश्वर की इच्छा न थी कि वह सजीव विटेन्बर्ग लौटें।

१७ फरवरी को लूथर के हृदय में पीडा उठी परन्तु थोडी ही देर में अच्छी होगई। लूथर ने सबके साथ भोजन किया और सदा की भांति खूब वार्तालाप किया। इसके उपरान्त लूथर सोने के लिये अपने कमरे में चले गये। अर्द्धरात्रि के निकट लूथर ने अपने सेवक को बुलाया। लूथर ने कहा, 'मुझे बडी सुस्ती मालूम होती है, मेरी पीडा बढती जाती है। इसके उपरान्त कुछ चैन मालूम हुई और लूथर उठकर कमरे

त्रयोदश परिच्छेद

लूथर की मृत्यु

१५३७ की फरवरी में मालकाल्ड में युद्ध के संबंध में एक धर्म संबंधी सभा की गई। लूथर भी यहां उपस्थित हुआ। परन्तु यहां आने पर उसे बड़ा भयंकर रोग हो गया। अश्मरी या मूत्रकृच्छ्र रोग हो जाने के कारण एकादश दिवसों तक लूथर मूत्र त्याग न कर सके। यद्यपि ऐसी भयंकर अवस्था थी कि जीवन से उनके मित्र निराश हो चुके थे परन्तु लूथर ने अपनी यात्रा न तोड़ी। फल भी अच्छा ही हुआ और चलने के कारण लूथर रोग मुक्त हो गये। इसी प्रकार एकबार लूथर के हृदय के निकट कुछ रुधिर के जम जाने से भी लूथर को बड़ा कष्ट उठाना पड़ा था। लूथर कान और दांत की पीड़ा से बहुत हैरान रहते थे।

इस ही साल रोम ने यह देखा कि प्रोटेस्टैंट प्रसिबल से नहीं दबाये जा सकते, पुनः सामनीति का आश्रय लिया। इस समय पोप था पाल्स तृतीय। यह पोप कुछ अच्छे स्वभाव का भी था। इसने कहा कि लूथर की बहुत सी बातें सत्य हैं अतः हम लोग लूथर की उन सब बातों को मानने तथा अपना सुधार करने को प्रस्तुत हैं। उसने सभा का स्थान भी निश्चित किया जहां उभय पक्ष मिलकर परस्पर समझौता कर सकते थे। लूथर उनकी इन चालों में कब फंसनेवाले थे। लूथर ने कई पुस्तकें पोप की धूर्तता प्रकट करने के लिये लिखी।

उनका इस का फल यह हुआ कि पोप की चाल न चली।
इसही भांति पोप पक्ष से युद्ध करते करते लूथर की जीवन अवधि समाप्त हो चली और १५४६ का वर्ष आउपस्थित हुआ।

मैंसफील्ड के सामन्त कुल में परस्पर बटवारे के विषय में कुछ झगड़ा खड़ा हुआ। उन लोगों ने लूथर को निमन्त्रण दिया कि लूथर आकर सीमा का विवाद निश्चित करदें यद्यपि लूथर को इन विषयों का बहुत कम ज्ञान था परन्तु तब भी उन्हें ईसलीबन जाना पड़ा। अत: विटेन्बर्ग में १७ जनवरी को अपना अंतिम उपदेश दे लूथरने २३ जनवरी को अपनी जन्मभूमि के लिये प्रस्थान किया। लूथर के साथ उनके मित्र जोना और उनके दो पुत्र थे। मैंसफील्ड की सीमा पर इन्हें शत अश्वारोही मिले जो इनकी अगवानी के लिये भेजे गये थे। इस प्रकार लूथर बड़े सम्मान सहित अपनी जन्मभूमि पहुंचे। परन्तु, मार्ग ही से उनका स्वास्थ्य बिगड़ चला था और ईसलीबन पहुंचते पहुंचते उनकी शारीरिक अवस्था बहुत बिगड़ गई। लूथर को विश्वास होगया कि मेरा समय अब आगया है अब उन्हें घर लौटने की इच्छा होने लगी। परन्तु ईश्वर की इच्छा न थी कि वह सजीव विटेन्बर्ग लौटें।

१७ फरवरी को लूथर के हृदय में पीड़ा उठी परन्तु थोड़ी ही देर में अच्छी होगई। लूथर ने सबके साथ भोजन किया और सदा की भांति मधुर वार्तालाप किया। इसके उपरान्त लूथर सोने के लिये अपने कमरे में चले गये। अर्धरात्रि के निकट लूथर ने अपने सेवक को बुलाया। लूथर ने कहा, 'मुझे बड़ी सुस्ती मालूम होती है, मेरी पीड़ा बढ़ती जाती है।' इसके उपरान्त कुछ बेचैनी ... लूथर उठकर

में टहलने लगे। दो एकबार टहल के फिर पलंग पर सो रहे। इस समय लूथर के पास उनके दो पुत्र और उनका मित्र जोना था। लूथर ने कहा "मृत्यु आगई, हम जाते हैं। ईश्वर! अपनी आत्मा तुम्हें सौंपते हैं" जोना ने पूछा "पवित्र पिता! क्या आप अपने जीवन के धार्मिक विचारों में पूरा विश्वास रख कर मरते हैं" लूथर ने कुछ आँखें खोल कर उत्तर दिया "हाँ"। इसके उपरान्त लूथर फिर सो गये। निकटस्थ लोगों ने देखा कि लूथर का मुख पीला पड़ता जाता है। लूथर का शरीर ठंडा होने लगा। श्वाँस धीमी पड़ने लगी। अंत में एक दीर्घ निश्वास निकली और 'सुधारक' संसार से उठ गया।

लूथर का शरीर एक दिन वहीं (ईसलीबन में) रहा। कई मूर्तियां बनाई गई और तस्वीरें उतारी गईं। जान फ्रेडरिक समाचार सुनते ही अन्तिम भेंट करने को दौड़ पड़े। मैंसफील्ड के सामन्त कुलवालों ने अपना झगड़ा बिना किसी विवाद के तय कर लिया। बीस तारीख को लूथर का शव गाड़ी पर चढ़ाकर विटेम्बर्ग भेजा गया। अश्वारोहियों की एक पल्टन सम्मानार्थ साथ थी। ईसलीबन नगर की जनता नगर के फाटक तक शव के साथ गई। दो दिनों तक चलने के उपरान्त सब विटेम्बर्ग पहुँचे और वहीं गिरजे में लूथर को समाधि * दी गई।

* पोप के भक्तों ने लूथर की मृत्यु के विषय में मन मानी झूठी अफ़वाहें फैला कर अपनी नीच प्रकृति का पूरा परिचय दिया है। कुछ ने कहा लूथर की अचानक मृत्यु होगई, कुछ ने कहा शैतान ने उनका गला घोट दिया। एक महाशय लिखते हैं कि लूथर का शव इतनी दुर्गन्धि देता था कि वह मार्ग में

लूथर की वसीयत का संक्षेप में अर्थ यह था कि उसकी सारी सम्पत्ति की उत्तराधिकारिणी उसकी प्यारी केथराइन हो। लूथर ने अपनी वसीयत में केथराइन की बड़ी प्रशंसा की है। लूथर की मृत्योपरान्त लूथर के सारे ग्रन्थ एकत्रित किये गये और सात भागों की एक पुस्तक में छापे गये। केथराइन लूथर के उपरान्त थोड़े ही दिन जीवित रही। १५४७ तक केथराइन विटेन्बर्ग ही में रहती रही परन्तु जब चार्ल्स पंचम ने नगर घेर लिया तो केथराइन वहां से अन्यत्र चली गई। चलते समय कई राजे महाराजों ने उसे अच्छे उपहार दिये। लूथर की सम्पत्ति और इन सब उपहारों को मिलाकर केथराइन के पास इतना होगया कि वह आनन्द से जीवन बिता सके। जब विटेन्बर्ग फिर इलेक्टर के अधिकार में आगया तब केथराइन फिर विटेन्बर्ग लौट आई। १५५२ में विटेन्बर्ग में बड़ी महामारी फैल गई और केथराइन को विवश हो विटेन्बर्ग त्यागना पड़ा। केथराइन के पास

में फेंक दिया गया। लूथर जब जीवित था तब भी उसकी मृत्यु की झूठी खबरें खूब फैलाई जाती थीं। इन समाचारों में लूथर की मृत्यु का ऐसा भयंकर निरूपण दिया जाता था कि लोगों के हृदय कांप उठते थे। परन्तु यहां पर एक घटना उल्लेखनीय है। १५४७ में (लूथर की मृत्यु के एक वर्षोपरान्त) चार्ल्स पंचम ने विटेन्बर्ग जीत लिया और नगर में प्रवेश किया। सैनिकों ने लूथर की एक प्रतिमा जिसमें दो लड़ दिये थे चार्ल्स को दिखाया। स्पेनवासी पोपभक्त चार्ल्स को बहुत दबाने लगे कि लूथर की समाधि खोद कर उसके शव का अपमान किया जाय और शव को फांसी दी जाय। परन्तु चार्ल्स ने उत्तर दिया "मैं मृतक के साथ युद्ध नहीं करता"। परन्तु शोक! उस समय इस प्रकार मृतकों से युद्ध बहुत होता था।

जो कुछ था सब उसने बेंच डाला और टरगाऊ में अपने अंतिम दिवस बिताने का निश्चय कर टरगाऊ के लिये चल पड़ी। परन्तु मार्ग में घोड़े बिगड़ गये और तोड़ा कर भागने लगे। केथराइन ने कूदने का उद्योग किया, कूदने में गिर पड़ी और गहरी चोट खागई। इस ही चोट से तीन महीने तक बीमार रहने के उपरान्त २० दिसम्बर, सन् १५५२ में मर गई।

लूथर के विषय में एक निष्पक्ष विद्वान् की सम्मति उद्धृत कर यह संक्षिप्त जीवनी समाप्त की जाती है। "ईश्वर की इच्छा थी कि लूथर एक बहुत बड़ा और सुन्दर धर्म सुधारक नेता हो। यही कारण है कि उसका चरित्र दो विरोधी परन्तु घोर अतिशयोक्ति पूर्ण रंगों से रंगा गया है। लूथर के विपक्षी यह देखकर कि किस निर्दयता के साथ वह उनके शताब्दियों के धार्मिक विचारों तथा पवित्र भावों को तोड़ मरोड़ रहा है, उसे दुष्ट मनुष्य ही नहीं वरन् राक्षस समझते थे। उसके अनुयायी यह समझ कर कि लूथर ही की कृपा से उन्हें सत्य मार्ग तथा सत्य धर्म का ज्ञान हुआ है उसकी कृतज्ञता तथा भक्ति में ऐसे पग गये थे कि वे उसमें दोष देखना तो दूर रहा मनुष्यातीत गुण और आभा देखते और उसे साक्षात् देवता का औतार मानते थे। परन्तु हमें न शत्रु की घृणा न मित्र का प्रेम अपना पथ दर्शक बनाना चाहिये, हमें उसके चरित्र की ओर ध्यान धरकर लूथर की समालोचना करनी चाहिये। यह तो उसके शत्रु भी स्वीकार करेंगे कि लूथर में ये गुण भरपूर थे अर्थात् अपने निर्धारित सत्य के लिए उत्साह, अपनी कार्य प्रणाली की रक्षा में निर्भीक धीरता,

अपने सिद्धान्तों की रक्षा करने की योग्यता, उन सिद्धान्तों के प्रचारार्थ सतत उद्योग आदि। इन गुणों के साथ ही साथ यह भी कोई अस्वीकार नहीं कर सकता कि लूथर एक बहुत सदाचारी और सच्चा तथा निस्वार्थी पुरुष था। स्वार्थमय विचारों से परे, विषय भोग रहित, ससार के सुखों से वंचित लूथर की जीवनी एक अपूर्व आदर्श थी। परन्तु इन सद्गुणों के साथ ही साथ लूथर में कुछ मानुषिक स्वभाव के दोष भी थे। लूथर बहुधा इतना आवेश पूर्ण हो जाता था जितना कि बहुत से शांति प्रिय मनुष्यों को अच्छा न लगेगा। कभी २ लूथर अपने विचारों की सत्यता में ऐसा घोर विश्वास दिखाता था कि अभिमान की झलक आने लगती थी। उसकी दृढ़ता में एक प्रकार की हठ और धैर्य में अविमृश्यकारिता का दोष मिला रहता था। बहुधा वह अपने शास्त्रार्थों में क्रोध दिखा बैठता था। लूथर अपने आवेश में आने पर किसी की योग्यता या पद का ध्यान नहीं रखता था।

परन्तु ये सब दोष जो लूथर में दिखाये जा सकते थे सब उसके स्वभाव ही के दोष न थे। उनमें बहुत से दोष ऐसे हैं जो उसके युग की अवस्था के फल थे। उस समय की अर्ध सभ्य समाज में नम्रता के वे नियम प्रचलित न थे जो मनुष्य को अपना क्रोध रोकने को विवश करते हैं और जिनसे समाज में सुजनता का प्रचार होता है। उस समय के शास्त्रार्थ में मनमाना क्रोध, भाषा की कटुता, व्यक्तिगत आक्षेप, अश्लील बातें, कोई आश्चर्य का विषय नहीं समझी जाती थीं। हमें प्रत्येक मनुष्य के चरित्र का न्याय करते समय उसके समय की सभ्यता और नियमों पर ध्यान अवश्य रखना चाहिये। यह

जो कुछ था सब उसने बेंच डाला और टरगाऊ में अपने अंतिम दिवस बिताने का निश्चय कर टरगाऊ के लिये चल पडी। परन्तु मार्ग में घोडे बिगड गये और तोडा कर भागने लगे। केथराइन ने कूदने का उद्योग किया, कूदने में गिर पडी और गहरी चोट खागई। इस ही चोट से तीन महीने तक बीमार रहने के उपरान्त २० दिसम्बर सन १५५२ में मर गई।

लूथर के विषय में एक निष्पक्ष विद्वान् की सम्मति उद्धृत कर यह संक्षिप्त जीवनी समाप्त की जाती है। "ईश्वर की इच्छा थी कि लूथर एक बहुत बड़ा और सुन्दर धर्म सुधारक नेता हो। यही कारण है कि उसका चरित्र दो विरोधी परन्तु घोर अतिशयोक्ति पूर्ण रंगों से रंगा गया है। लूथर के विपक्षी यह देखकर कि किस निर्दयता के साथ वह उनके शताब्दियों के धार्मिक विचारों तथा पवित्र भावों को तोड मरोड रहा है, उसे दुष्ट मनुष्य ही नहीं वरन् राक्षस समझते थे। उसके अनुयायी यह समझ कर कि लूथर ही की कृपा से उन्हें सत्य मार्ग तथा सत्य धर्म का ज्ञान हुआ है उसकी कृतज्ञता तथा भक्ति में ऐसे पग गये थे कि वे उसमें दोष देखना तो दूर रहा मनुष्यातीत गुण और आभा देखते और उसे साक्षात् देवता का औतार मानते थे। परन्तु हमें न शत्रु की घृणा न मित्र का प्रेम अपना पथ दर्शक बनाना चाहिये, हमें उसके चरित्र की ओर ध्यान धरकर लूथर की समालोचना करनी चाहिये। यह तो उसके शत्रु भी स्वीकार करेंगे कि लूथर में ये गुण भरपूर थे अर्थात् अपने निर्धारित सत्य के लिए उत्साह, अपनी कार्य प्रणाली की रक्षा में निर्भीक वीरता,

अपने सिद्धान्तों की रक्षा करने की योग्यता, उन सिद्धान्तों के प्रचारार्थ सतत उद्योग आदि। इन गुणों के साथ ही साथ यह भी कोई अस्वीकार नहीं कर सकता कि लूथर एक बहुत सदाचारी और सच्चा तथा निस्वार्थी पुरुष था। स्वार्थमय विचारों से परे, विषय भोग रहित, संसार के सुखों से वंचित लूथर की जीवनी एक अपूर्व आदर्श थी। परन्तु इन सद्गुणों के साथ ही साथ लूथर में कुछ मानुषिक स्वभाव के दोष भी थे। लूथर बहुधा इतना आवेश पूर्ण हो जाता था जितना कि बहुत से शांति प्रिय मनुष्यों को अच्छा न लगेगा। कभी २ लूथर अपने विचारों की सत्यता में ऐसा घोर विश्वास दिखाता था कि अभिमान की झलक आने लगती थी। उसकी दृढ़ता में एक प्रकार की हठ और धैर्य में अविमृश्यकारिता का दोष मिला रहता था। बहुधा वह अपने शास्त्रार्थों में क्रोध दिखा बैठता था। लूथर अपने आवेश में आने पर किसी की योग्यता या पद का ध्यान नहीं रखता था।

परन्तु ये सब दोष जो लूथर में दिखाये जा सकते थे सब उसके स्वभाव ही के दोष न थे। उनमें बहुत से दोष ऐसे हैं जो उसके युग की अवस्था के फल थे। उस समय की अर्ध सभ्य समाज में नम्रता के वे नियम प्रचलित न थे जो मनुष्य को अपना क्रोध रोकने को विवश करते हैं और जिनसे समाज में सुजनता का प्रचार होता है। उस समय के शास्त्रार्थ में मनमाना क्रोध, भाषा की कटुता, व्यक्तिगत आक्षेप, अश्लील बातें, कोई आश्चर्य का विषय नहीं समझी जाती थीं। हमें प्रत्येक मनुष्य के चरित का न्याय करते समय उसके समय की सभ्यता और नियमों पर ध्यान अवश्य र[illegible] चाहिये।

जो कुछ था सब उसने बेच डाला और टरगाऊ में अपने अंतिम दिवस बिताने का निश्चय कर टरगाऊ के लिये चल पड़ी। परन्तु मार्ग में घोड़े बिगड़ गये और तोड़ा कर, भागने लगे। केथराइन ने कूदने का उद्योग किया, कूदने में गिर पड़ी और गहरी चोट खा गई। इस ही चोट से तीन महीने तक बीमार रहने के उपरान्त २० दिसम्बर सन् १५५२ में मर गई।

लूथर के विषय में एक निष्पक्ष विद्वान् की सम्मति उद्धृत कर यह संक्षिप्त जीवनी समाप्त की जाती है। "ईश्वर की इच्छा थी कि लूथर एक बहुत बड़ा और सुन्दर धर्म सुधारक नेता हो। यही कारण है कि उसका चरित्र दो विरोधी परन्तु घोर अतिशयोक्ति पूर्ण रंगों से रंगा गया है"। लूथर के विपक्षी यह देखकर कि किस निर्दयता के साथ वह उनके शताब्दियों के धार्मिक विचारों तथा पवित्र भावों को तोड़ मरोड़ रहा है, उसे दुष्ट मनुष्य ही नहीं वरन् राक्षस समझते थे। उसके अनुयायी यह समझ कर कि लूथर ही की कृपा से उन्हें सत्य मार्ग तथा सत्य धर्म का ज्ञान हुआ है उसकी कृतज्ञता तथा भक्ति में ऐसे पग गये थे कि वे उसमें दोष देखना तो दूर रहा मनुष्यातीत गुण और आभा देखते और उसे साक्षात् देवता का औतार मानते थे। परन्तु हमें न शत्रु की घृणा न मित्र का प्रेम अपना पथ-दर्शक बनाना चाहिये, हमें उसके चरित्र की ओर ध्यान धरकर लूथर की समालोचना करनी चाहिये। यह तो उसके शत्रु भी स्वीकार करेंगे कि लूथर में ये गुण भरपूर थे अर्थात् अपने निर्धारित सत्य के लिए उत्साह, अपनी कार्य प्रणाली की रक्षा में निर्भीक वीरता,

अपने सिद्धान्तों की रक्षा करने की योग्यता, उन सिद्धान्तों के प्रचारार्थ सतत उद्योग आदि। इन गुणों के साथ ही साथ यह भी कोई अस्वीकार नहीं कर सकता कि लूथर एक बहुत सदाचारी और सच्चा तथा निस्वार्थी पुरुष था। स्वार्थमय विचारों से परे, विषय भोग रहित, संसार के सुखों से वंचित लूथर की जीवनी एक अपूर्व आदर्श थी। परन्तु इन सद्गुणों के साथ ही साथ लूथर में कुछ मानुषिक स्वभाव के दोष भी थे। लूथर बहुधा इतना आवेश पूर्ण हो जाता था जितना कि बहुत से शांति प्रिय मनुष्यों को अच्छा न लगेगा। कभी २ लूथर अपने विचारों की सत्यता में ऐसा घोर विश्वास दिखाता था कि अभिमान की झलक आने लगती थी। उसकी दृढ़ता में एक प्रकार को हठ और धैर्य में अविमृश्यकारिता का दोष मिला रहता था। बहुधा वह अपने शास्त्रार्थों में क्रोध दिखा बैठता था। लूथर अपने आवेश में आने पर किसी की योग्यता या पद का ध्यान नहीं रखता था।

परन्तु ये सब दोष जो लूथर में दिखाये जा सकते थे सब उसके स्वभाव ही के पाप न थे। उनमें बहुत से दोष ऐसे हैं जो उसके युग की अवस्था के फल थे। उस समय की अर्ध सभ्य समाज में नम्रता के वे नियम प्रचलित न थे जो मनुष्य को अपना क्रोध रोकनेको विवश करते हैं और जिनसे समाज में सुजनता का प्रचार होता है। उस समय के शास्त्रार्थ में मनमाना क्रोध, भाषा की कटुता, व्यक्तिगत आक्षेप, अश्लील बातें, कोई आश्चर्य का विषय नहीं समझी जाती थीं। हमें प्रत्येक मनुष्य के चरित का न्याय करते समय उसके समय की सभ्यता और नियमों पर ध्यान अवश्य रखना चाहिये। यह

बात ठीक है कि धर्माधर्म का ज्ञान सब समय में था परन्तु चाल ढाल रीति-रसम में बड़ा परिवर्तन हो सकता है। बहुत से दोष जिन्हें आज हम दोष कहते हैं, उस समय में किसी को दोषवत् नहीं मालूम होते थे। वे ही बहुत से गुण जिन्हें आज हम बुरा समझते हैं स्यात् लूथर की सफलता के कारण थे। मूर्खता में मग्न, धार्मिक छल कपट से आच्छादित, जनता को उत्साहित करने के लिये, असि सम्पन्न कट्टर धर्मान्धता से युद्ध करने के लिये स्यात् वैसे ही उत्साह तथा उद्दण्डता की आवश्यकता थी। यदि लूथर बहुत मीठी और सुरीली तान अलापता तो उस समय की जनता की निद्रा कदापि भंग न होती। अपने जीवन के अन्तिम भाग में लूथर को अपनी सफलता देख बहुत कुछ अभिमान हो गया था। बात भी सही है अपने ही जीवनकाल में सारे यूरुप को अपना अनुयायी होते देख, राजा महाराजाओं को अपना पक्षपाती होते पा, पोपों का सिंहासन डोलते देख, यदि लूथर को थोड़ा सा अभिमान न हो आता तो मानना पड़ता कि लूथर मनुष्य न होकर देवता था।

इति

ओंकार आदर्श-चरितमाला

प्रयाग के

निम्नलिखित जीवन चरित तैयार हैं